लालरेखा



हिन्दी के सर्वाधिक
लोकप्रिय उपन्यासों में से एक

कुशवाहा कान्त

शानियाँ

चवर

लाल रेखा

— कुशवाहा कान्त

धायँ !....धायँ !....

'पकड़ो ! उधर गया, उधर !'

धायँ !...चीखकर एक सिपाही लुढ़क गया।

'फायर !....' स्वर किसी अफसर का था।

दुम्म !....धायँ !....दुम्म !....

रात्रि के अन्धकार में सैकड़ों राइफलें गरज उठीं। मन्द समीरण का कलेजा बारूद के धुएँ से भर गया। घोंसले में सो हुए पंछी बाहर निकलकर भयभीत हो उड़ चले ! जमीन पर गि हुए सूखे पत्ते सिपाहियों की भगदड़ से परेशान हो उठे।

× × ×

।रजेएट !....'

सर !....'

कधर गया ?' यह थे सुपरिण्टेण्डेण्ट—पुलिस मिस्टर शर्मा।

'इधर ही तो आया था सर !....' यह था पुलिस सारजेण्ट रामलाल।

'देखो, भागने न पाये...चाहे जिन्दा चाहे मुर्दा, हमें उसको पकड़ना ही है आज....बड़ा परेशान कर रखा है बेईमान ने !'

'हम लोग पूरी कोशिश कर रहे हैं सर !....' रामलाल ने कहा—'हवा की मजाल नहीं बिना टकराये निकल जाय...'

'शाबास !....' मि० शर्मा बोले—'इनाम लेना हो तो हथेली पर जान लेकर खोजो....दस हजार कैश, पुलिस का ऊँचा ओहदा...समझे ?'

'समझ गया !'

धायँ !....धायँ !....

'वह उधर गया....मैं देखता हूँ, तुम यहीं ठहरो सारजेण्ट !'

मि० शर्मा हाथ में भरा रिवाल्वर लिए उधर दौड़े।

सारजेण्ट रामलाल खोजती आँखों से अन्धकार में इधर-उधर देखता रहा। पीछे की झाड़ी जरा-सी खड़की और जब तक रामलाल की राइफल उस ओर घूमी, तब तक उसके गर्दन में किसी के रिवाल्वर की नली आ लगी और धीमी किन्तु गम्भीर आवाज आई—'सारजेण्ट रामलाल ! चुपचाप हाथ ऊपर कर दो... सीधे खड़े रहो...मुँह से जरा भी आवाज निकली कि मेरे रिवाल्वर की गोली और तुम्हारी जान साथ ही निकलेगी...'

दस हजार का इनाम और पुलिस का ऊँचा ओहदा !

एस० पी० मि० शर्मा के वाक्य रामलाल के कानों में कीड़े [illegible] रहे थे। वह क्रान्तिकारी, जिसके पीछे सारे देश की

पुलिस परेशान थी, उसके पीछे खड़ा था और उसका रि... र रामलाल की गर्दन छूकर कह रहा था जैसे—'इन्सान की शानियत रुपयों और ओहदों से ज्यादा कीमती है!' क्या करे राम... अपनी जान सभी को प्यारी होती है। जान रहे तो रुपये और ओहदे काम आ सकते हैं, नहीं तो सारी चीजें बेकाम, व्यर्थ!

'तुम कौन हो युवक!....' रामलाल ने पूछा।

'यही तो सरकार भी जानना चाहती है...' पीछे से युवक ने कहा, जिसका सारा शरीर ग्रेट कोट से ढँका था—तभी तो दस हजार कैश और पुलिस का ऊँचा ओहदा!....बड़ी आसानी से पूछ रहे हो तुम मेरा परिचय, जैसे इतना बड़ा इनाम स्वाती की बूँद बनकर तुम्हारे चातक मुख में आ पड़ेगा...'

'यह बात नहीं है युवक!....मैं तुम्हारी बहादुरी का लोहा मानता हूँ....'

'तुम्हीं क्यों, सारी गोरी सरकार मानती है....'

'तुम्हारे जैसा आदमी अगर पुलिस में हो तो बड़ी जल्दी आसमान छू ले....तुम क्यों नहीं....'

'चुप रहो सा० रामलाल।' युवक का स्वर कुछ तीखा था—'बहादुरों को भौंकने की आदत नहीं होती, वे हाथी की तरह चुपचाप चलते हैं....भौंकना तो तुम जैसे कुत्तों को ही मुबारक हो....'

'युवक, तुम्हारी जबान बड़ी खतरनाक है...'

'मगर अपनी गर्दन पर रखी इस रिवाल्वर का खतरा भी मत भूलो और जरा धीरे-धीरे बोलो. जानते नहीं, एक कुत्ते का भौंकना सुनकर दूसर कुत्ते भी....ठीक से खड़े हो जाओ, शायद मि० शर्मा आ रहे हैं। याद रखो, जरा भी जुम्बिश खाई तो खोपड़ी आकाश पर उड़ जायगी....' ...गा

युवक सजग हो गया। उसका रिवाल्वर रामला... क...

गया। युवक ने रामलाल के पीछे अन्धकार में अपने को
या। तभी—'रामलाल ! कुछ पता लगा ?'
क का रिवाल्वर धीरे से रामलाल की गर्दन पर रेंगा।

'जी....जी नहीं !'

'उधर भी नहीं....आखिर गया कहाँ...' मि० शर्मा का स्वर हैरान था—'बाग का कोना-कोना हमने घेर रखा है....'

'भाग गया होगा सर !' रामलाल के मुँह से उसकी गर्दन पर रखा हुआ रिवाल्वर बोल रहा था।

'भाग नहीं सकता वह रामलाल ! हमें उसे पकड़ना है। याद रहे, यह परिश्रम अगर व्यर्थ गया तो तुम्हारा बहुत बड़ा नुकसान होगा। आज के आक्रमण का सारा श्रेय तुम्हीं को है....'

'मैंने बहुत कोशिश की सर ! मगर शैतान हवा बनकर वह चला उफ् !....' रामलाल धीरे से चीखा।

'क्या हुआ रामलाल ?' मि० शर्मा रामलाल के पास आ गये।

'कुछ नहीं सर ! शायद गर्दन में कोई कीड़ा घुस गया था।'

तभी अचानक मि० शर्मा की दृष्टि रामलाल के पीछे खड़ी एक अस्पष्ट छाया पर जा पड़ी। उनके रिवाल्वर को सजग होते देर न लगी परन्तु उसका प्रतिद्वन्द्वी उनसे भी तेज था।

'हाथ ऊपर करो मि० शर्मा !' युवक के दूसरे हाथ का रिवाल्वर मि० शर्मा की पसली पर था—'हाँ अब ठीक !....अपना रिवाल्वर नीचे गिरा दो....तुम भी अपनी राइफल रख दो सार्जेंट रामलाल....दोनों में से कोई कुछ बोला तो खैर नहीं....'

मि० शर्मा और रामलाल दोनों विवश थे। क्रान्तिकारी युवक के दोनों हाथ इतने सजग थे कि जरा-सा हिलते ही मौत के दूत तैयार।

'...प लोग इसी तरह चुपचाप बाग के फाटक की ओर
...ने कहा—'मुझे बाहर जाना है....'

रिवाल्वर की ठेस खाकर दोनों आगे बढ़े। बाग् शानिय आ गया। बीसों सशस्त्र सिपाही पहरे पर खड़े थे।

'सिपाहियों को दूर चले जाने के लिये आज्ञा दो' युवक ने कहा और मि० शर्मा की पसली से लगा हुआ रिवाल्वर जरा-सा और आगे सरका।

'तुम लोग उस तरफ चले जाओ और उसे खोजो!'

मि० शर्मा ने सिपाहियों को आज्ञा दी। वे आज्ञाकारी नौकर अफसर का हुक्म पाकर वहाँ से तुरन्त हट गये।

'अच्छा विदा सज्जनों! हो सका तो फिर मिलेंगे...' कहकर युवक बिजली-सा चमक कर कहीं लुप्त हो गया।

मि० शर्मा और रामलाल के रिवाल्वर गरजे मगर उसके पहले ही युवक की छाया जाड़े के ठिठुरते अन्धकार में लुप्त हो चुकी थी।

फायर का स्वर सुनकर सिपाही भी दौड़े आये।

मि० शर्मा हाँफते हुए खड़े थे। गरज कर बोले—'उधर दौड़ो, पूरी ताकत से! हाथ में आकर निकल न जाय...'

फिर भगदड़ मच गई। मि० शर्मा और रामलाल भी पूरी ताकत से उस ओर भागे जिधर वह युवक दौड़कर लुप्त हो गया था।

× × ×

जाड़े की रात केवल चार घण्टे बीती है मगर लगता है जैसे आधी बीत चली हो।

शहर का बाहरी हिस्सा है। इधर मकान कुछ दूर-दूर पर हैं। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० शर्मा की कोठी आसमान छूती खड़ी है। उसी से सटा हुआ बगल में एक छोटा-सा

...रह पर जैसे कोई ममतामयी माँ अपने छोटे बच्चे को ...अ... कर खड़ी हो। मि० शर्मा के मकान की दूसरी छज्जे पर एक धुंधली-सी छाया उतरी और बगलवाले ...स मकान की छत पर कूद पड़ी।

कोई आवाज नहीं हुई। किसी ने देखा भी नहीं।

वह छाया नीचे पहुँच गई। एक कमरे का दरवाजा उसने खोला। अन्दर आकर स्विच दबाया तो कमरे का छोटा-सा बल्ब हँस पड़ा, प्रकाश बिखेरता हुआ।

वह धुंधली-सी छाया अब स्पष्ट आकृति बन गई। सलोना गोरा चेहरा, बड़ी-बड़ी कजरारी आँखें, सोलह साल का शरीर साड़ी से लिपटा—ऐसा लगा, जैसे उस सौन्दर्य के आगे बल्ब की हँसी शाम का धुंधलका बन गई हो।

कमरे में कोई विशेष सामान न था। एक मेज और उस पर कुछ किताबें, दो-तीन कुर्सियाँ, एक आलमारी और सामने दीवार पर कुछ टेढ़ा टँगा हुआ एक बड़ा-सा आइना—बस!

युवती मेज के पास कुर्सी पर बैठ गई और एक पुस्तक उठा कर देखने लगी। पुस्तक का नाम था 'शहीद भगत सिंह'।

उसने दो चार लाइनें पढ़ीं, फिर पुस्तक रख दी। शीशे के सामने खड़ी हुई। देखने लगी....अपने यौवन को जैसे उसने कभी देखा ही न हो।

फिर उसका ध्यान शीशे के तिरछे टँगने पर गया। उसने हाथ बढ़ाकर उसे ठीक से टाँगना चाहा तो शीशा दीवाल से अलग होकर उसके हाथ में आ गया और उसके पीछे...शीशे के पीछे.... चौंक पड़ी युवती। उस बड़े-से शीशे के पीछे एक छोटी-सी आल-...छिप्री थी और उसमें रखे थे रिवाल्वर! तीन-चार-पाँच.... ...ती का शरीर कुछ काँप-सा गया।

उसने हाथ का शीशा धीरे से नीचे रख दिया और ...
आलमारी में गौर से देखने लगी। पाँच रिवाल्वर... ...
काला रङ्ग, भयावना आकार, काफी कारतूस। कुछ कागज ...
फाइल में रखे हुए और एक डायरी।

युवती धीरे से डायरी बाहर निकाली। ऊपर ही सुस्पष्ट अक्षरों में लिखा था—'लालचन्द बी० ए०'

डायरी खोल नजर दौड़ाई तो एक पृष्ठ पर लिखा पाया—

शहर से पढ़ने आया हूँ मगर गाँव का सुन्दर वातावरण यहाँ नहीं। आज माँ की चिठ्ठी आई थी, लिखा था—'लाल! तेरे बिना अकेला बुढ़ापा चल फिर नहीं पाता। तू था तो तेरे बहाने मैं भी खा लेती थी पकाकर....तू नहीं है तो रो-रोकर ही पेट भर लेती हूँ!' माँ भी कितनी पगली है। कैसे समझाऊँ उसे कि माँ की ममता से बढ़कर इस समय मेरे हृदय में देशभक्ति लहरें ले रही है!

कुछ पृष्ठ उलटने पर यों लिखा था—कालेज जाता हूँ मगर पढ़ने में मन नहीं लगता। देश की राजनीतिक दशा भी आजकल बड़ी दुखद हो उठी है। गोरी सरकार पर विचार करता हूँ तो हाथ खून से होली खेलना चाहते हैं, गोरों के लाल-लाल खून से! आजकल कालेज में भी गुलामी की मनोवृत्ति बढ़ानेवाली शिक्षा दी जाती है। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करूँ?

फिर कुछ पृष्ठ के बाद—पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की पुत्री रेखा मेरी सहपाठिनी है! बड़ी अच्छी लड़की है। उससे बातें करता हूँ तो बड़ा आराम मिलता है। काश! वह गोरी सरकार के अनुचर मि० शर्मा की पुत्री न होती।

रेखा मुझे बहुत प्यार करती है। उसके प्यार में माद...ता नहीं स्निग्धता है। मुझे वह बड़ी प्रिय है। मेरे व

। आज ही कहती थी—'मेरे बगल में एक छोटा-सा ...राज है उसी में तुम चलकर रहो, मुझे बड़ा सहारा

युवती ने डायरी के बहुत से पृष्ठ एक साथ उलट दिए, पढ़ने लगी—रेखा और मैंने साथ ही बी० ए० पास किया है। घर जाने की सोचता हूँ तो रेखा जाने नहीं देती। यों भी मैं घर नहीं जा सकता। आजकल एक क्रान्तिकारी दल से मेरा सम्पर्क हो गया है। रेखा बहुत बड़ी शरारती लड़की है। कभी-कभी तो मैं उससे परेशान हो जाता हूँ। यदि वह जान जाय कि मैं ही वह क्रान्तिकारी हूँ जिसके पीछे उसके पिता तथा कितने ही जासूस परेशान हैं तो जाने वह क्या सोचे। शायद वह अपने पिता से कहकर मुझे पकड़वा दे.... सरदार कौन हैं, यह अब तक नहीं जान सका। वे बहुत बार बहुत भेष में मुझसे मिल चुके हैं, परन्तु मुझे उनका परिचय नहीं मिल सका।

युवती पढ़ते-पढ़ते हाँफने लगी थी। उसने डायरी उस गुप्त आलमारी में फेंक दी और दोनों हाथों से अपने सर का पिछला हिस्सा दबाने लगी।

उसने शीशा उठाकर उस आलमारी के सामने लगा दिया, फिर कुर्सी पर आ बैठी। तभी बाहर की कुण्डी खड़की, ताला खुला और दरवाजा खोलकर एक युवक दौड़ता-हाँफता कमरे में घुस आया और बिना इधर उधर देखे दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया।

युवक ने सन्तोष एवं छुटकारे की लम्बी साँस ली, फिर अपने आप ही कहा—'चलो बला टली! मगर कौन जाने यहाँ घुसते ...ता...' तभी उसकी दृष्टि कुर्सी पर बैठी हुई उस युवती

पर पड़ी, जो एकटक उसकी ओर देखती हुई उसकी परेशानियों पर गम्भीर हो रही थी।

युवक चौंक पड़ा....उसने जल्दी से अपने हाथ का रिवाल्वर कोट की जेब में छिपाया, फिर बोला—रेखा, तुम! अच्छा!... ठहरो, मैं अभी आया!'

तेजी से युवक बगल के कमरे में चला गया और दो ही मिनट बाद कमीज और पायजामा पहने बदन पर रैपर डाले आ पहुँचा।

'रेखा! इतनी रात को यहाँ कैसे!'

'क्या करती!...पिताजी वर्दी से लैस होकर दौरे पर दौड़ गये शाम को ही, माताजी ने मुझे पैदा तो किया मगर पाल नहीं सकीं कि ईश्वर का बुलावा आ गया। अकेली थी, तबीयत न लगी। सोची चलकर तुम्हीं से कुछ बातें करूँ।'

तभी बाहर सड़क पर कुछ लोगों के दौड़ने की आवाज आई और लाल का दरवाजा जोरों से खड़का।

लाल के चेहरे पर केवल एक क्षण के लिए भय का पीलापन झलका, वह दरवाजा खोलने को उठ खड़ा हुआ!

'तुम बैठो, मैं दरवाजा खोलती हूँ लाल भैया!....' रेखा ने कहा।

उसने झटपट एक किताब खोलकर हाथ में ले ली और आकर दरवाजा खोल दिया। बाहर बीसों पुलिसमैन, सारजेण्ट रामलाल तथा सुपरिण्टेण्ड मि० शर्मा खड़े थे।

'रेखा, तुम यहाँ हो?' मि० शर्मा ने पूछा।

'हाँ पिताजी!' रेखा ने कहा।

'कब से?'

'बहुत देर से हूँ पिताजी! दो घण्टों से....लाल भैया से टैगोर-साहित्य पर बहस चल रही थी....बात क्या है?'

'कुछ नहीं!' कहकर मि० शर्मा अन्दर आ गये। सतर्क दृष्टि से उन्होंने कमरे की ओर देखा—'रेखा! यहाँ कोई और तो नहीं आया था?'

'नहीं पिताजी!' रेखा ने कहा—'केवल मैं और लाल भैया हैं?'

लाल भी कुर्सी से उठकर आ गया था, बोला—'क्या बात है बाबूजी?....'

'कुछ नहीं बेटा! एक डाकू के पीछे पड़े हैं हम लोग....' मि० शर्मा ने कहा—'वह इधर ही कहीं भागकर आया है....क्यों रामलाल?'

'यस सर!....'

'खैर! आज तो निराशा ही हाथ लगी। कहाँ जायगा बच कर? चलो तुम लोग...रेखा! मैं दो घण्टे बाद ही घर आ सकूँगा! तुम थोड़ी देर में घर चली जाना। वहाँ कोई न होगा।'

'अच्छा पिताजी!'

सब लोग चले गये। लाल कुर्सी पर आ बैठा। रेखा भी दरवाजा बन्द करके आ बैठी।

'लाल भैया! तुम कुछ परेशान-से हो...'

'नहीं तो!'

'नहीं तो कैसे?' रेखा बोली—'जरूर तुम परेशान हो। जाने भी दो...पुलिसवालों का काम बड़ा खराब होता है। अच्छा हुआ, मैंने झूठ बोलकर उन्हें टाल दिया। अगर वे जान जाते कि तुम अभी ही कहीं से चले आ रहे हो तो व्यर्थ के सवाल पूछ कर तुम्हें परेशान करते....है न लाल भैया?'

'तुम बहुत चालाक होती जा रही हो आजकल....' लाल ने कहा।

'चालाक तो नहीं, हाँ सतर्क कह सकते हो?....' रेखा मुस्करा कर लाल की ओर देखती हुई बोली।

'रेखा! अपनी मुस्कुराहट बन्द करो....'

'क्यों?'

'मुझे अच्छी नहीं लगती...'

'तुम्हें तो अच्छा लगता है केवल यह बड़ा-सा मनहूस शीशा, जिसे सीधा टाँगने का तरीका भी तुम्हें नहीं मालूम। एकदम टेढ़ा टाँग रखा था। देखो तो, मैंने सीधा टाँग दिया है।'

लाल चौंक पड़ा। बोला—'तुमने उस शीशे को छुआ था?'

'बिना छुए हुए वह सीधा कैसे होता?'

'रेखा! तुम बड़ी शैतान हो। मेरी कोई चीज बिना मुझसे पूछे मत छुआ करो और मेरे घर में चोरी-चोरी घुसा भी मत करो...'

'शैतान तुम हो....' रेखा ने कहा—'चोर भी तुम्हीं हो...चोरी करके आ रहे थे, बचा दिया मैंने तो लगे मुझी को डाँटने।'

रेखा रूठकर बैठ गई। मुँह दूसरी ओर कर लिया उसने।

'रूठ गई रेखा?'

'मैं नहीं बोलती तुमसे...'

'रूठो मत रेखा!....' लाल ने रेखा की ठुड्डी पकड़कर कहा—'तुम मेरे जीवन की ज्वलन्त रेखा हो! तुम्हारे बिना मेरे अन्तः का स्नेह सूखकर हृदय मरुस्थल बन जायगा....बोलो रेखा! रूठी नहीं हो न?'

'तुम बड़े पाजी हो लाल भैया! तुम मुझे डाँट क्यों देते हो? मैं तुम्हारे घर में आऊँगी, सब-कुछ उलट-पुलट करूँगी, देखूँ मुझे कौन रोकता है?

'कोई नहीं रोकेगा तुम्हें...अब, मैं भी कुछ नहीं कहूँगा....'

'लाल भैया !' रेखा ने कहा—'मुझे भी रिवाल्वर चलाना सिखा दो !

'जरूरत ही क्या है ?'

'तुम्हें तो जरूरत है !....' रेखा ने कहा—'नारी को तुम इतनी कमजोर क्यों समझते हो ? मुझे सिखा दो तो अवसर आने पर रेखा का निशाना भी देख लेना कभी....'

'कैसी बातें कर रही है तू आज !'....रेखा की बातें सुनकर लाल हैरान-सा हो गया था।

'कैसी भी तो नहीं लाल भैया !....' रेखा ने कहा—'नारी को अशक्त और अबला समझने वाले पुरुष से एक नारी अपनी दृढ़ता का इजहार कर रही है केवल !....मैं चलती हूँ अब...फिर कभी बातें होंगी....'

'घर जाओगी ?'

'हाँ उस घर में, जहाँ गोरी सरकार की सम्पदा हर महीने वेतन रूप में आती है। सच कहती हूँ लाल भैया ! उस घर का खाना मुझे जहर-सा लगता है। ऐसा जहर, जो जान लेने के बदले जीवन देता है। मजबूरी है। आज की हर नारी मजबूर है पुरुष के हाथों। पिताजी का मोह है, नहीं तो सभी मोह-माया छोड़कर तुम्हारा साथ देती। कभी-कभी अन्तर की क्रान्ति इतना विकराल रूप धारण कर लेती है कि पिताजी भी मेरी दृष्टि में निशाचर जैसे दिखलाई पड़ने लगते हैं....'

'तू आज पागल हो गई है....'

'जरूर ?' फीकी हँसी हँसकर कहा रेखा ने—'जो रिवाल्वर लेकर बाहर घूमने जाता है, जिसके पीछे पुलिस दौड़ती है हाथ में

बन्दूक लेकर....और जो इतना बड़ा शीशा भी सीधा टाँग नहीं सकता, उसके लिए एक नारी पागल से बढ़कर और हो ही क्या सकती है !'

'तुम पहेली हो रही हो आज रेखा !'

'तुम सशक्त हो, पुरुष हो....' रेखा ने कहा—'और सशक्त पुरुष छोटी-मोटी बातों को पहेली समझकर उपेक्षित कर देता है....तुमने अपने जीवन में दो ही नारियों की छाया देखी। अपनी माँ की गोद में तुम पले परन्तु उसके अन्तर को समझने की चेष्टा नहीं की तुमने। मेरे साथ तुम पढ़े और मुझे पहेली समझकर दूर-दूर रहना चाहते हो....तो नारी का विशाल हृदय, नारी की प्र रक शक्ति देख ही कैसे सकते हो !'

'मैंने सब कुछ देखा है रेखा ! मगर तुम्हारे जैसी लड़की नहीं देखा कभी....'

'देखा होगा मगर समझ नहीं सके होगे। कभी हँसना, कभी रोना, कभी रोष, कभी रूठना, कभी काठ के आगे पत्थर....नारी की हर हरकत पहेली ही तो है....क्या करोगे समझकर ! जो इंसान आँखें बन्द करके चलता है, वह कुछ समझ भी तो नहीं पाता....'

'रेखा तुम चली जाओ....अभी इसी वक्त...'

'ऊब गये अपनी जीवन रेखा से !'—बोली रेखा—'तभी तो एकान्त चाहते हो ! मगर एकान्त तुम्हें कुछ भी सहारा नहीं देगा। मेरी अनुपस्थिति में कुछ भी नहीं समझ सकोगे। नारी तो पुरुष की आवश्यकता होती है। पुरुष के लिए भी तो नारी का साहचर्य अनिवार्य है। अकेला पुरुष अधूरा है। वह कुछ भी नहीं कर सकता। पुरुष शक्ति है तो नारी प्रेरणा, बिना प्रेरणा के शक्ति का मार्ग अन्धकारपूर्ण है। लाल अग्नि है तो रेखा उसकी ज्वाला, इसे न भूलो लाल भैया ! मैं जाती हूँ, तुम जरा अपने उस बड़े-से

शीशे का ख्याल रखना, कोई दूसरा उसे सीधा न करने पाये, नहीं तो....' रेखा दरवाजे की ओर बढ़ी।

लाल ने उसका रास्ता रोक लिया—'रेखा! रुको अभी....'

'मैं भाग नहीं रही हूँ....कहो!'

'तुमने उस शीशे को देख लिया...मेरा मतलब उसके पीछे, यानी तुमने सब कुछ देख लिया रेखा?'

'मैंने केवल लाल को देखा है...' रेखा ने स्थिर वाणी से कहा—'और लाल को देख चुकने पर उसकी कोई चीज मेरे लिए अनदेखी नहीं रही....'

'अपने पिताजी से कह दोगी?'

'लाल भैया!' रेखा तेज स्वर में बोली—'रेखा के लिए पिता और भाई का दर्जा बराबर है। वह दो में से किसी को भी खोना नहीं चाहती, यही तो नारी के मोह की विवशता है। कभी समझोगे भी इसे या नहीं....'

रेखा दरवाजा खोलकर एकदम बाहर आ गई। देखा उसने, बाहर के धुंधले अन्धकार में कोई भद्दी-सी मोटी शक्ल लाल के दरवाजे पर खड़ी है। वह डरी नहीं, पीछे भी नहीं लौटी। वहीं से कुछ तेज स्वर में पूछा—'कौन है? वहाँ कौन खड़ा है....'

'कुछ मिल जाय बेटी!...' आवाज करुण थी।

'क्या मिल जाय?' रेखा बिगड़ी—'पत्थर! ऐसी रात में तो पत्थर भी नहीं दीखेंगे चले जाओ।'

'भिखारी को भीख चाहिये बेटी!...पत्थर से पेट थोड़े ही भरेगा...'

रेखा आगे बढ़ आई, बोली—'तुम भिखारी हो? रात में भला कौन भीख देगा तुम्हें? पूरे अवसरवादी हो, आये थे चोरी करने, कुछ हाथ नहीं लगा तो भीख ही सही!'

'क्या है रेखा?' लाल भी बाहर निकल आया।

'देखो न लाल भैया! यह भीख माँगता है!....' रेखा बोली—'इतना जाड़ा पड़ रहा है कि जवान भी बूढ़े बन जायँ और यह बूढ़ा होकर भी भीख माँगने निकला है...जाओ भाई, अपना रास्ता देखो। दिखाई न देता हो तो चलो मैं ही कुछ दूर तक पहुँचा दूँ....'

लाल ध्यानपूर्वक भिखारी को देख रहा था। तभी भिखारी ने दाहिने हाथ की उँगली मस्तक पर रखकर एक बार खुजलाया। लाल चौंक पड़ा, एक कदम पीछे हट गया। रेखा से बोला—'रेखा तुम घर जाओ! मैं इसे कुछ देकर अभी विदा करता हूँ।'

'अच्छी बात है, मैं चली....तुम इस भिखारी की पूजा करो.... मैं बाहर न निकली होती तो अभी यह तुम्हारी दीवार में सेंध लगा चुका होता।'

रेखा चली गई। लाल ने सतर्क दृष्टि से चारों ओर देखा फिर भिखारी से बोला—'अन्दर आइये...'

भिखारी और लाल चुपचाप अन्दर आये। लाल ने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया, फिर दोनों कुर्सी पर आ बैठे।

'आप....और इस वेश में?' लाल ने चकित वाणी में कहा।

'हाँ! काम बहुत आवश्यक था...' भिखारी बोला—'समय बहुत कम है। मुझे अभी लौट जाना है...यह लड़की कौन थी? जबान की बहुत तेज है...'

'हाँ! रेखा थी....मिस्टर शर्मा की बेटी....' लाल ने कहा।

'लाल!' भिखारी की आवाज कुछ कड़ी थी—'तुम्हारे पास यह लड़की क्यों आई थी?'

'सरदार!' लाल ने नम्र स्वर में कहा—'आप कुछ दूसरा ख्याल न करें। रेखा मेरी प्रेरणा है। रेखा से अलग मेरा कोई अस्तित्व नहीं....'

'मानता हूँ....' भिखारी बोला—'मगर क्रान्तिकारियों के लिए नारी की प्रेरणा गतिरोध उत्पन्न करने वाली होती है....फिर यह तो दुश्मन की बेटी है, इसका क्या भरोसा ?'

'जिस दिन रेखा पर से मेरा विश्वास उठ जायगा, सारी दुनिया ही मेरे लिए विश्वासहीन हो जायगी सरदार ! मैं अपने चरित्र पर विश्वास करता हूँ। सात्विक-प्रेम चरित्र को और भी उन्नत करता है....'

'बस करो लाल !' भिखरी बोला—'यहाँ मैं प्रेम की व्याख्या सुनने नहीं आया हूँ। तुम मेरी सूरत नहीं पहचानते मगर मेरा उग्र स्वभाव जानते हो। अगर किसी भी दिन मुझे मालूम हुआ कि तुम्हारा हृदय क्रान्ति का चिन्तन छोड़कर प्रेम का चिन्तन करने लगा है, मेरा रिवाल्वर तुम्हारी जान लेने में जरा भी नहीं हिचकेगा। मैं तुम्हें सावधान करता हूँ, क्योंकि तुम मण्डल के एक सहकारी कार्यकर्त्ता हो। मैं तुमसे हाथ धोना नहीं चाहता...'

'मैं सावधान रहूँगा सरदार ! आज भी मैं कम सावधान नहीं था....आप विश्वास रखें, कुत्ते अगर पायेंगे भी तो केवल मेरी लाश। जिन्दा लाल उनके पंजे से हमेशा बाहर रहेगा।'

'कल चन्द्रनाथ के मुकदमें का फैसला है।' भिखारी ने कहा—'चन्द्रनाथ भी बड़ा सावधान युवक था मगर पुलिस के हाथों पड़ ही गया। देखो कल क्या होता है ?'

'उसके विरुद्ध सबूत बहुत तगड़ा है सरदार ! उसे फाँसी तो अवश्य ही होगी....' लाल बोला।

'लाल ! अगर उसे फाँसी की सजा हुई तो जज के लिए भी तुम अपना रिवाल्वर तैयार रखो। भारत को ऐसे न्यायकर्ताओं की जरूरत नहीं, जो गोरी सरकार की हँसी के पीछे अपने आँसू भूल जायँ। तुम मेरा मतलब समझ गये न ? कल कचहरी में तुम उपस्थित रहोगे....'

'बहुत अच्छा।'

'चन्द्रनाथ को कल फाँसी की सजा अगर हुई तो रात को जज साहब भी तुम्हारे हाथों से आसमान पर पहुँच जायँ, इसका ख्याल रखना—ठीक है न लाल!....'

'जी हाँ! मैं तैयार रहूँगा....'

'एक बात है लाल?' भिखारी बोला।

'कहिये...'

'क्या तुमको चन्द्रनाथ पर विश्वास है?'

'जिस पर आपको विश्वास हो उस पर मुझे अविश्वास करने का कोई कारण नहीं दीखता सरदार!'

'ठीक है...' भिखारी ने कहा—'अभी तक तो उसने अपनी जबान बन्द ही रखी है....मगर अपनी जान सभी को प्यारी होती है लाल! कहीं फाँसी की सजा सुनकर उसकी दृढ़ता नष्ट न हो जाय?'

'इसे तो आप ही समझ सकते हैं सरदार, मैं क्या बताऊँ?'

'खैर, देखा जायगा....तुम मेरे दाहिने हाथ हो लाल, इसे कभी न भूलो...'

'मैं इसे हमेशा रटता हूँ सरदार! और इस प्रयत्न में हूँ कि केवल आपका दाहिना हाथ ही न रहकर, आपका दिल—आपका दिमाग—आपका सब कुछ हो जाऊँ!'....लाल ने कहा।

भिखारी बाहर आकर तेजी से एक ओर को चला गया। लाल दरवाजा बन्द कर चारपाई पर पड़ रहा। मण्डल के सरदार को उसने भिखारी वेश में कभी नहीं देखा था। वह सोचता रहा,—कौन हैं सरदार, क्या करते हैं, कहाँ रहते हैं, तभी जागृति का फाटक बन्दकर उसकी पलकों में नींद आ बैठी।

● ●

लाल के मकान से निकलकर रेखा अपने दरवाजे पर आ खड़ी हुई। दरवाजा बन्द था। रेखा ने पुकारा–'दाई, ओ दाई !'

दाई उस बूढ़ी का नाम था जो रेखा के घर में जवानी से ही नौकरी कर रही थी। रेखा की माँ के मर जाने पर उसी ने अपने दूध से उसे जीवन दिया था।

'दाई !...मर गई क्या !' रेखा चिल्लाई।

तभी दरवाजा खुला, बुढ़िया बड़बड़ाती हुई दिखाई पड़ी—'तुझे पाल-पोस कर बड़ी कर दिया, अब केवल मरना ही तो रह गया है मुझे...जिस दिन मरी नहीं कि तेरी आँखों में नदी न आ जाय तो कहना।'

'पिताजी आये ?'—रेखा ने अन्दर आकर पूछा।

'उनकी भी पिस्तौल कहीं गरज रही होगी—अभी क्यों लौटने लगे'—बुढ़िया ने कहा—'वह पुलिस की नौकरी मुझे जरा भी पसन्द नहीं। न तन को आराम, न मन को चैन। इन्सान क्या हुआ, गली का कुत्ता बन गया। जरा-से पेट के लिए दरवाजा-दरवाजा सूँघना....राम-राम ! यह नौकरी क्या है मेरी मौत !....बाप-बेटी के चलते दिन भर हाय-हाय करूँ और रात भर जागूँ...'

'दाई ! मुझे खाना दे दो–नींद आ रही है....' रेखा ने कहा !

'कहाँ थी इतनी देर तक ?....उसी लाल के घर न ?....कल आवे वह लाल का बच्चा तो उसे पीला न करके छोड़ूँ तो कहना—हाँ, नहीं तो...'

'मैं आ गया हूँ दाई, क्या बात है ?'

'अरे तुम ?....लाल ? आओ...ओह, आप ?'

दरवाजे पर मि० शर्मा थे, लाल नहीं।

'यह दाई रोज रात में मर जाती है पिताजी ! दरवाजा जल्दी नहीं खोलती....' रेखा बोली।

'और तू जीती रहती है तो उस लाल-पीले के घर क्यों जाती है ?' दाई ने कहा—'देखिये न, अभी को परेड करके आ रही है। फूल-सी देह, न समय पर खाना, न सोना....देख लेना एक दिन बीमार बनकर पड़ रहेगी तो दाई याद आयेगी इसे...'

'अच्छा जाने भी दो...चलो खाना लाओ....' मि० शर्मा ने कहा।

दाई ने खाना सजाया। बाप-बेटी दोनों खाने लगे।

'आप यह नौकरी छोड़ दीजिये पिताजी !' रेखा ने कहा।

'क्यों, बात क्या है ?'

'लोग पुलिस वालों को बुरा आदमी समझते हैं....'

'समझा करें...' मिस्टर शर्मा बोले—'पुलिस ही तो जनता की रक्षक है, नहीं तो उनका साँस लेना भी मुश्किल हो जाय। इन्सान पर अगर कानून की बंदिश न हो तो हर आदमी मुजरिम बन जाय रेखा !'

'मैं तो कानून को शासक का जुल्म समझती हूँ...'

'रेखा ! मैं सरकारी आदमी हूँ....और हर सरकारी नौकर को नमकहलाल होना चाहिये। मेरे कानों में फिर ऐसी बातें न जायँ।'

'आप सरकारी आदमी हैं और मेरे पिताजी भी...और हर बेटी अपने पिता के सामने अपने विचार प्रकट करने के लिए स्वतन्त्र होती तो कितना अच्छा था ?'

'रेखा मैं आज थका हूँ। बोलने का जी नहीं करता। अब तुम चुपचाप खाओ...'

तभी टेलीफोन की घण्टी बज उठी। मि० शर्मा खाना

छोड़कर तेजी से उठ गये। मुँह-हाथ धोकर रिसीवर उठा लिया।

'हलो !....हाँ शर्मा स्पीकिंग....क्या ?....आपके पास....आश्चर्य है....तब तो बहुत बुरा हुआ....डर की कोई बात नहीं, हाँ ! अभी तो मैं खाना खा रहा था...मेरी नींद में कोई बाधा नहीं पहुँचेगी....हाँ ! आप अभी आ सकते हैं...' मि० शर्मा ने रिसीवर रख दिया। उनके मस्तक पर चिन्ता की रेखाएँ उठ आई थीं।

'कौन था पिताजी।' रेखा ने पूछा।

'सेशन्स जज मि० सक्सेना थे...'

'क्या कह रहे थे ?'

'कुछ नहीं...तुम जाकर सो रहो....सरकारी बातें सभी से नहीं बताई जातीं ?'

मि० शर्मा अपने कमरे में चले गये। थोड़ी देर बाद दरवाजे पर एक कार रुकी और सेशन्स जज साहब भीतर आये।

'आइये !....' मिस्टर शर्मा ने कहा।

दोनों कोच पर आ बैठे।

'आप बहुत डर गये हैं !'

'जी नहीं...' जज ने कहा—'कुछ चिन्तित अवश्य हो रहा हूँ। क्रान्तिकारियों के गिरोह ने तो सरकार की नाक में दम कर रखा है, अपनी जान का डर सभी को होता है, फिर मैं तो सरकारी अफसर हूँ। मेरी रक्षा का भार आपको लेना ही पड़ेगा....'

'आप निश्चिन्त रहिए...' मि० शर्मा ने सान्त्वना दी—'मैं आपके प्राणरक्षार्थ कुछ उठा न रखूँगा—आप वह पत्र अपने साथ लाये हैं ?'

'जी हाँ !' कहकर जज ने एक छोटा-सा कागज उनके सामने रख दिया। मि० शर्मा लेकर पढ़ने लगे। छोटा-सा पतला कागज, टाइप किये हुए सुस्पष्ट अक्षरों में—जज मि० सक्सेना को

सावधान किया जाता है कि अगर उन्होंने कल चन्द्रनाथ को फाँसी की सजा दी तो रात तक उन्हें भी अपनी मौत की तैयारी कर लेनी पड़ेगी....

'अब तक इन दुष्टों ने जो धमकी दी, उनमें से एक भी झूठी नहीं निकली। ये शैतान अपना काम कर ही गुजरे और सरकार की सारी शक्ति फेल होकर रह गई...' मि० सक्सेना ने कहा।

'हम लोग तो पूरी चेष्टा करते ही हैं जज साहब !...'

'और कहीं आपकी चेष्टा असफल रही तो मुझे जान से ही जाना पड़ेगा....आपका तो एक्सपेरिमेण्ट होगा और मैं मिट ही जाऊँगा....इससे तो अच्छा यह है कि मैं अपना फैसला ही बदल दूँ...'

'आप सोच लीजिए....'

'मगर फैसला भी अब बदला नहीं जा सकता...लोग कहेंगे डरकर हिम्मत हार गये....फैसले की नकल भी आज ही वायसराय को भेजी जा चुकी है। उनका अनुरोध था...वे शुरू से ही इस मामले की स्टडी कर रहे थे....मैं क्या करूँ, कुछ समझ में नहीं आता मि० शर्मा...'

'आप धीरज रखिये !'—मि० शर्मा ने कहा—'मैं अभी फोन करके आपके बँगले पर तथा आपके साथ सुरक्षा के लिए पुलिस का प्रबन्ध किये देता हूँ। कोर्ट में कल आपके चारो ओर पुलिस ही पुलिस। आप विश्वास रखें कोई भी सन्दिग्ध व्यक्ति आपके पास नहीं जा सकेगा। कल रात भर मैं स्वयं आपके बँगले पर रहूँगा....'

मि० शर्मा फोन करने दूसरे कमरे में चले गये। जज साहब अकेले उल्टी-सीधी साँसें लेते हुए कुर्सी पर बैठे रहे। कमरे की हर चीज उन्हें रिवाल्वर-सी ही दिखाई दे रही थी। मस्तिष्क धीरे-धीरे असीम भय से विकृत होता जा रहा था।

वे उठने लगे, दूसरे कमरे में मि० शर्मा के पास जाने के लिए। तभी—'खबरदार! जरा भी बदन हिलाया, आवाज निकाली तो ठीक नहीं होगा....'

आवाज सुनकर जज साहब मुर्दा हो गये। चिल्लाना चाहा मगर मुँह की जबान तालू से जा सटी। भय से उनके अङ्ग-अङ्ग निश्चल हो गये। वे न बैठ सके न उठ ही सके। आधा उठे—झुके हुए बेचारे ने हाथ चुपचाप ऊपर कर दिये।

'अरे! यह क्या?' रेखा की आवाज थी।

रेखा जज साहब के सामने आ गई मगर वे वैसे ही आधा उठे—आधा बैठे रहे, हाथ ऊपर की ओर किये।

'चाचा जी! यह आप कौन-सी कसरत कर रहे हैं?' रेखा ने हँसकर कहा।

तभी मि० शर्मा टेलीफोन करके वापस लौटे, बोले—'क्या है रेखा!...अरे, यह आप क्या कर रहे हैं जज साहब?'

अब जज साहब आश्वस्त हुए—धड़ाम से सोफे पर बैठकर हाँफने लगे। थोड़ी देर बाद बोले—'किधर गया?'

'कौन?....' मि० शर्मा ने पूछा।

'वही मि० शर्मा, वही....कातिल!....मुझसे बोला, खबरदार जरा भी बदन न हिले....' जज साहब ने कहा।

रेखा हँसकर बोली—'चाचाजी! वह तो मैं बोली थी। दाई की बिल्ली को मैं उधर बाँध आई हूँ। शैतान रात भर दौड़ लगा कर चूहे पकड़ा करती है....'

मि० शर्मा हँसने लगे। जज साहब को जान मिली।

• •

आज कोर्ट में बड़ी भीड़ है। जितनी संख्या जनता की है उससे कुछ ही कम सशस्त्र पुलिस हैं। जजी कचहरी को पुलिस

दल ने चारों ओर से घेर रखा है। सफेदपोश जासूसों की संख्या भी कम नहीं है। न्यायालय के दरवाजे पर स्वयं मिस्टर शर्मा खड़े हैं और जो कुछ इने-गिने लोग भीतर जाने का साहस कर रहे हैं, उनकी तलाशी ले रहे हैं। किसी व्यक्ति पर थोड़ी-सी शङ्का होने पर भी उसे पूछ-ताछ के लिए जासूसों के हवाले कर दिया जाता है।

धोती-कुर्ते में एक सुन्दर युवक मिस्टर शर्मा के सामने आ खड़ा हुआ। मिस्टर शर्मा ने उसे देखा, बोले—'लाल बेटा! तुम भी मुकदमा देखने आये हो!'

'हाँ बाबूजी! बैठा था सो इधर चला आया....' लाल ही था वह। मि० शर्मा ने लाल की जेब देखी, उसकी कमर टटोली और इतमीनान कर लेने पर अन्दर जाने की आज्ञा दे दी।

भीतर लाल दर्शकों के मध्य में जा बैठा! अपराधी चन्द्रनाथ कटघरे में खड़ा था। पीछे दो बन्दूकधारी थे। चन्द्रनाथ के हाथों में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी पड़ी थी। चन्द्रनाथ ने लाल को देखा और लाल ने चन्द्रनाथ को—दोनों एक दूसरे को कुछ देर तक देखते रहे।

चन्द्रनाथ की आँखों में उपेक्षा एवं घृणा का भाव था, जैसे उसके अन्तर में कोई तीव्र तूफान उठ रहा हो, जैसे उसकी आँखें कह रही हों—मेरी मौत का तमाशा देखने आये हो! मंडल ने मेरे लिए क्या किया। देश को आजाद देखने के पहले ही मैं मरना ही नहीं चाहता....अगर मुझे फाँसी हुई, तो याद रखो, तुममें से कोई भी न बचेगा...मैं सब बता दूँगा....सब कुछ कह दूँगा....'

ग्यारह बजते ही बगल का दरवाजा खुला और जज साहब भीतर आये। उनके अगल-बगल चार सशस्त्र सिपाही थे।

जज ने केवल एक ही वाक्य में अपना फैसला सुनाया।

'मुजरिम चन्द्रनाथ का जुर्म हर तरह से साबित हो चुका है, इसलिए उसे कोड़े मारते-मारते मौत की सजा दी जाती है।'

लाल ने दाँत पीसा। दर्शक स्तब्ध रहे। चन्द्रनाथ ने कुछ कहना चाहा मगर जज साहब पुलिस के पहरे में बाहर जा चुके थे।

मिस्टर शर्मा न्यायालय के दरवाजे पर अब तक खड़े थे और गौर से बाहर निकलने वालों का चेहरा पढ़ रहे थे।

तभी एक सफेदपोश जासूस आया और धीरे से मि० शर्मा के कान में बोला—'मुजरिम इकबाल करना चाहता है....'

मि० शर्मा चौंक पड़े, फिर बोले—'तुम चलो, मैं अभी आया....'

जासूस चला गया। थोड़ी देर बाद मि० शर्मा कचहरी के हवालात में आये। पुलिस का कड़ा पहरा था। हवालात का ताला खोल दिया गया। वे अन्दर घुसे। चन्द्रनाथ सर नीचा किये हुए टहल रहा था। हाथ की मुट्ठियाँ कसी हुई थीं। बड़ा बेचैन लग रहा था वह।

'क्या कहना चाहते हो?....' उन्होंने रोबीली आवाज में पूछा।

'ओह! आप...आइए....मैंने ही आपको बुलाया....मैं....मुझे कुछ कहना....' उद्वेग से वह बोल नहीं पा रहा था—'मैं सब कुछ कहना चाहता हूँ—मैं सारा भेद जानता हूँ....'

'तुम इकबाल करना चाहते हो?...'

'जी हाँ, अगर मेरी जान छोड़ दी जाय?' चन्द्रनाथ ने कहा।

'अपनी जान सुरक्षित समझो तुम?'—मि० शर्मा ने कहा—'किसी बात का डर नहीं। मैं आज रात को तुमसे भेंट करूँगा.... तुम तब तक अपनी जबान काबू में रखो। मेरे सिवाय एक शब्द

किसी से मत कहो, नहीं तो सारा किया कराया मिट्टी हो जायगा...'

'आप मुझसे कब मिलेंगे ?'

'रात आठ बजे के बाद किसी समय।' कहकर मि० शर्मा घूम पड़े। बाहर आये तो उनके मस्तक पर चिन्ता और संतोष दोनों के भाव थे।

● ●

चन्द्रनाथ को फाँसी की सजा हो गई....न्याय ने अपना कार्य समाप्त कर दिया...मगर चन्द्रनाथ की आँखें ? चन्द्रनाथ की उस भेदक दृष्टि में दृढ़ता नहीं थी। मौत का भय था, मण्डल के प्रति घृणा थी। कहीं वह प्राणों के भय से सारा भेद खोल दे तो !

लाल को सन्तोष था तो केवल यही कि सरदार को कोई नहीं जानता। अगर चन्द्रनाथ ने सब कुछ बता भी दिया तो केवल उस जैसे सौ-पचास युवकों को फाँसी हो सकेगी, परन्तु सरदार का तो बाल भी बाँका न होगा—और सरदार यदि जीवित रहे तो अपनी शक्ति से फिर वैसा ही गिरोह बना लेंगे।

तो चन्द्रनाथ को फाँसी की सजा हो गई और उसे फाँसी देने-वाले जज की 'फाँसी' का इन्तजाम लाल को करना है आज !

वह दृढ़ प्रतिज्ञ है। सरदार की आज्ञा से वह आग में कूद सकता है, आसमान पर चढ़ने की ताकत हो तो तारे भी तोड़ ला सकता है।

धीरे-धीरे सन्ध्या का आँचल फैल रहा था। लाल ने अपनी गुप्त आलमारी खोली और उनमें से दो भरे रिवाल्वर निकाल जेब में रखकर पीछे घूमा तो चौंक पड़ा। रेखा खड़ी थी। चुस्त शिकारी पायजामा, ऊनी कोट और खुले बाल।

'रेखा, तुम कब आई!...'

'अभी ही तो चली आ रही हूँ लाल भैया! जब तुम उस शीशे में अपना मुँह देख रहे थे....'

'तुम्हारा सर देख रहा था!' लाल बिगड़ कर बोला।

'तुम कहीं घूमने चल रहे हो लाल भैया? मैं भी इसी इरादे से आई थी। शाम के समय घूमना बड़ा अच्छा लगता है....'

'मगर मुझे घूमने की फुर्सत नहीं रेखा।' लाल ने कहा—'तुम जाओ। मैं एक जरूरी काम से जा रहा हूँ।'

'मैं भी जरूरी काम से तुम्हारे साथ चलूँगी....' रेखा गम्भीर होकर बोली—'तुम्हारा निशाना अगर चूकेगा तो मैं उसे सँभाल दूँगी....'

'रेखा!' लाल ने कहा—'मैं आज बहुत परेशान हूँ। मुझे अकेला छोड़ दो....'

'अच्छी बात है लाल भैया!'—रेखा संजीदा स्वर में बोली—'जाओ तुम अकेले ही घूमने—मगर तुम याद रखो, अपनी जीवन रेखा को छोड़कर ज्यादा दूर तक आगे नहीं जा सकते....आज नहीं तो कभी तुम्हें मेरी आवश्यकता पड़ेगी ही.... हाँ, लाल भैया! तुमने कुछ सुना!...'

'क्या?...'

'एक क्रान्तिकारी को फाँसी की सजा हुई है आज! और क्रान्तिकारी दल वाले आज रात में जज साहब की जान लेंगे....'

'तुझे कैसे मालूम हुआ रेखा?'

'अभी कल रात जज चाचा आये थे और पिताजी से बहुत देर तक बातें करते रहे....बहुत डर गये थे बेचारे...'

'तू आजकल बहुत बातें बनाना सीख गई है रेखा!'

'तुम्हारे साथ चलूँ तो रिवाल्वर चलाना भी सीख जाऊँ लाल भैया!....यही एक साध रह गई मन में कि मैं तुम्हारे साथ चलने योग्य न बन सकी....कोशिश तो कर ही रही हूँ...'

'रेखा, मैं कहता हूँ—मुझे एकान्त चाहिए...तुम अभी चली जाओ....'

'मैं जाती हूँ लाल भैया !'—रेखा का स्वर आर्द्र हो उठा था—'मुझे तुम्हारा साथ चाहिये और तुम्हें चाहिये एकान्त....मुझे जाना ही पड़ेगा...क्या तुम्हें मेरा कुछ भी मोह नहीं लगता लाल भैया ! पहले तो ऐसे नहीं थे तुम !....जब से तुम उस बड़े-से शीशे में अपना मुँह देखने लगे हो, तभी से मुझसे बात-बात में बिगड़ जाते हो।'

'रेखा अगर तुम्हारी जबान तलवार होती तो अच्छा था !'

'तलवार की लड़ाई तो पुरानी पड़ गई है लाल भैया !.... आजकल तो गोली की मार चलती है। जिस दिन मेरी बोली में गोली की तेजी आ जाय, तभी मानोगे मुझे...'

लाल खीझ उठा था। उसने आगे बढ़कर रेखा की बाँह पकड़ ली और उसे ढकेलकर बाहर कर दिया—'निकल यहाँ से शैतान कहीं की....'

'पहले बाँह पकड़ते हो....फिर धक्का देते हो'—रेखा बोली—'पुरुषों की यह आदत छूटेगी नहीं कभी....तुम्हारी यह आदत न छुड़ा दी तो मेरा नाम रेखा नहीं....'

रेखा चली गई। लाल परेशान-सा कुर्सी पर बैठ गया। वह जानता है कि रेखा उसका अधिकांश भेद जान चुकी है, फिर भी उसे और अधिक जानने नहीं देना चाहता। जितना वह जान चुकी है, उतने तक में सीमित रहे यही अच्छा है। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की बेटी इससे अधिक और क्या उसकी सहायता कर सकती है !

वह आजकल बदल गई है। उसने अपने अन्तर की जीवनी-शक्ति को जगा लिया है। उसे लगता है वह सुकुमार युवती नहीं, रणचण्डी है, शक्ति की प्रेरणा की गति है। वह लाल का साथ

चाहती है और लाल अपना सहारा उसे देना नहीं चाहता.... रेखा अब लाल के सहारे से कुछ निराश हो चुकी है। पुरुष से उपेक्षित नारी अब स्वयं अपना मार्ग निर्धारित करने को तत्पर है। वह अकेले ही लाल से आगे बढ़ना चाहती है।

रेखा जब घर आई तो मि० शर्मा कहीं जाने के लिए तैयार थे। रेखा को देखकर बोले—'घूमकर आ रही हो बेटी !'

'गई तो थी इसी इरादे से....' बोली वह—'मगर लाल भैया लाल-पीले हो पड़े। अब नहीं जाऊँगी घूमने पिताजी !....'

'मैं जज साहब के बँगले पर जा रहा हूँ....यदि कोई आवे तो बता देना...'

मि० शर्मा कार पर जज साहब के घर आये। आज पुलिस की पूरी फौज पहरे पर तैनात थी।

वहाँ कुछ जरूरी हिदायतें देकर लौटने लगे तो—'कहाँ ?' जज साहब का चेहरा आज पीले से बदल कर सफेद हो रहा था।

'मैं बहुत जल्द लौटूँगा।' मि० शर्मा बोले—'जेल जाकर उस मुजरिम चन्द्रनाथ से भेंट करनी है...शायद कुछ काम की बातें निकल आयें...'

'अच्छा, मगर जल्द लौटियेगा ! मेरा केवल आपही पर विश्वास है....'

मि० शर्मा कार पर जा चढ़े।

पाँच मिनट बाद ही वह जेलर के कमरे में थे।

'मैं चन्द्रनाथ से भेंट करना चाहता हूँ....अकेले ही....गुप्त बातें करनी हैं...' उन्होंने कहा।

मि० शर्मा आये तो सन्तरी ने सलाम ठोंका। चन्द्रनाथ ने चिन्तित मुद्रा से उन्हें देखा।

'तुम जाओ....' मि० शर्मा ने सन्तरी को आज्ञा दी और वह चला गया।

चन्द्रनाथ काल-कोठरी में रखा गया था। आस-पास दूसरे बैरक नहीं थे। रात के आठ बज रहे थे। अन्धकार गाढ़ा हो चला था।

'आप आ गये !....' चन्द्रनाथ ने कहा—'देखिये, मैं जो भेद बता रहा हूँ, वह सरकार के बड़े काम की चीज है। इसके बदले मेरी जान ही बख्शी जाय, मैं केवल यह नहीं चाहता...'

'तब क्या चाहते हो ?'

'कोई सरकारी ओहदा !'

'मिलेगा !'—मि० शर्मा ने कहा—'मैं सिफारिश कर दूँगा... हाँ तो तुम बलबाइयों का सारा भेद जानते हो !....'

'जी हाँ ! एक-एक आदमी का नाम-पता बता दूँगा...'

'इस गिरोह का सरदार कौन है, जानते हो ?'

'यही एक भेद नहीं जानता...उससे मिल चुका हूँ मगर वह कौन है इसे कोई नहीं जानता....मगर क्या मेरी इतनी सहायता पर्याप्त नहीं।'

'बहुत है !' मि० शर्मा बोले—'तुम थोड़ी देर रुको, मैं फोन करके जज साहब को भी पहरे के अन्दर यहो बुलाता हूँ। उनके सामने ही तुम्हारा बयान लेना ठीक होगा....'

'जो कुछ करना हो जल्दी कीजिए....आप मण्डल की शक्ति नहीं जानते....मुझे अपनी जान का खतरा है....'

'चन्द्रनाथ ! यह न भूलो कि यह जेल है। यहाँ पर जो क्रान्तिकारी आयेंगे वे हाथों में हथकड़ी पहन कर ही....'

कहकर मि० शर्मा चले गये। दो ही मिनट बाद—

'चन्द्रनाथ !....' बड़ा ही गम्भीर स्वर आया।

'क्या है सन्तरी !....' चन्द्रनाथ ने सोचा सन्तरी लौट आया है !

मगर जंगले के बाहर देखते ही उसकी आँखों का आसमान

फट पड़ा। एक धुँधली-सी छाया, काले कपड़ों से ढँकी, हाथ में भयानक रिवाल्वर! चन्द्रनाथ का शरीर तूफान का झोंका बन गया—'तु....तुम....आप कौन हैं?'

छाया ने हाथ की उँगली से अपना मस्तक खुजलाया। बोली—'खबरदार! जोर से बोलने की कोशिश मत करना....'

'ओह!' हताश स्वर था चन्द्रनाथ का—'सरदार...आप.... यहाँ....मुझे छुड़ाने आये हैं!'

'आया तो था छुड़ाने ही मगर अब तुम्हें यहीं दफना करके जाऊँगा...' छाया ने कहा—'क्रान्ति-दूत जेलों में नहीं सड़ सकते, मगर तुम तो कुत्ते निकले चन्द्रनाथ! मेरा भी भय न लगा तुम्हें! देश के प्रति वफादारी का वादा तो तुम भूल ही गये परन्तु सरदार के रिवाल्वर की शक्ति भी याद न रही...'

'मुझे क्षमा कीजिये सरदार!....मुझे यहाँ से ले चलिए... मैंने अभी उन्हें कुछ भी नहीं बताया है....अब भी समय है....'

'समय बीत चला चन्द्रनाथ! अब कुछ नहीं हो सकता....'

'तो तुम भी यहाँ से भाग नहीं सकते...' चन्द्रनाथ तेज स्वर में बोला—'मैं चिल्लाऊँगा....शोर करूँगा...तुम्हारी गोली खाकर भी मरते दम तक चिल्लाता ही रहूँगा मैं....तुम भाग नहीं सकते....भाग नहीं सकते सरदार!...'

'चन्द्रनाथ, चिल्लाओ मत, कोई सुन नहीं सकता। सन्तरी को बाँधकर मैं उधर छोड़ आया हूँ। कोई मुझे रोक नहीं सकता.... खैर, इसे छोड़ो....क्या तुम्हें अपने किए पर पश्चात्ताप है? क्या तुम बाहर निकलकर अब भी ईमानदारी से मण्डल की सेवा करोगे?....'

'सरदार मुझे यहाँ से ले चलिए....'

'फिर तो तुम दगा नहीं दोगे....'

'नहीं सरदार! कभी नहीं....सोते-जागते कभी नहीं....'

'मैं सब तैयारी करके आया हूँ....मगर यहाँ से निकलने के पहले तुम्हें अपने अपराध की सजा भुगतनी पड़ेगी....'

'मैं तैयार हूँ....' चन्द्रनाथ ने कहा।

'इधर आओ....जँगले के पास....'

चन्द्रनाथ जँगले के पास आ गया।

'मुँह खोलो और जीभ सींकचों से बाहर निकालो!

'लीजिए....' चन्द्रनाथ ने आज्ञा पालन की।

'ठीक है....' सरदार ने हाथ में कोई चीज चमकी, आगे बढ़ी विद्युत गति से और चन्द्रनाथ चीख पड़ा। उसकी जीभ कटकर सरदार के हाथ में आ गई थी।

'अब खूब चिल्लाओ....बता दो जितना भेद तुम्हें बताना हो....कुत्ते! इसी मौत के काबिल थे तुम....अब तुम्हारे दोनों हाथ भी तोड़ दूँ ताकि तुम लिखकर भी कुछ न बता सको।...'

सरदार का रिवाल्वर सजग हुआ—धायँ! धायँ!

और चन्द्रनाथ के दोनों हाथ नीचे लटक पड़े। वह धुँधली छाया तेजी से एक ओर जाकर विलीन हो गई।

एक ही मिनट बाद मि० शर्मा दौड़े आये। गोली की आवाज उनके कानों में पड़ी थी।

'क्या हुआ, क्या हुआ चन्द्रनाथ!'

मगर चन्द्रनाथ बोले भी तो कैसे? पीड़ा से छटपटाता हुआ जमीन पर लोट रहा था वह। तभी जेलर तथा कई वार्डन भी दौड़े आये। साथ में कई लालटेनें भी थीं।

'यह गोली की आवाज कैसी थी?' जेलर ने पूछा।

'मैं इससे बातें करके आपके आफिस की ओर आ रहा था कि गोली की आवाज सुनकर इधर दौड़ आया....' मिस्टर शर्मा बोले—'इसे किसी ने गोली मार दी है....'

काल-कोठरी का ताला खोला गया। देखकर सब सन्न रह गए।

'इसकी जीभ काट ली गई है और दोनों हाथ तोड़ डाले गए हैं कि यह कोई भेद न बता सके...' हताश स्वर में मिस्टर में शर्मा बोले।

जेल में खतरे का घण्टा बज उठा। चारों ओर पुलिस दल दौड़ पड़ा। मगर उनके हाथ कोई न लगा। टेलीफोन भी खटक रहे थे। जासूसों की दौड़-धूप शुरू हो गई थी।

'मैं चलता हूँ'—मि० शर्मा जेलर से बोले—'मुझे जज साहब की भी खबर लेनी है....'

• •

जज साहब के मकान से थोड़ी ही दूर पर एक पतली-सी अँधेरी बदबूदार गली थी, जहाँ मनुष्य के पैर शायद ही कभी पड़ते हों। दो नकाबपोश एक मकान के पिछवाड़े छिपे खड़े हैं। कभी-कभी दोनों अपने चारों ओर गौर से देख लेते हैं।

'लाल? तैयार हो तुम!....'

'जी हाँ!...बिल्कुल सरदार!....'

'दिल में कोई हिचक, कोई भय तो नहीं?'

'जी नहीं....'

'चन्द्रनाथ का अन्त तुम सुन चुके हो—रास्ते से बाहर पैर रखते ही तुम्हारी भी वही गति होगी....समझ गए?'

'मुझे अपने पैरों पर विश्वास है, वे कभी रास्ते से दूर नहीं जा सकते'...लाल ने कहा।

'तुमने अपना वेश बदल लिया है न! मुँह पर दाढ़ी-मूँछें....'

'मै बिलकुल तैयार हूँ सरदार!'

'लो देखो!...' सरदार बोला—'इस वाटर-पाइप के सहारे

तुम इस मकान की छत पर पहुँचोगे....छत ही छत जज साहब के बंगले की छत पर पहुँचकर रोशनदान से...'

'मैं समझ गया....'

'भागते वक्त सावधान रहना....उधर कोने में एक मोटर सायकिल खड़ी है....उसमें काफी पेट्रोल है...देख लिए गये तो दो-चार दिन में वापस आना....अगर कोई देख न सके तो तुरन्त अपने घर चले जाना...अब मैं चलता हूँ...'

सरदार धीरे से चला गया।

लाल ने अपनी नकाब ठीक की फिर वाटर-पाइप के सहारे धीरे-धीरे ऊपर चढ़ने लगा। थोड़ी ही देर में वह उस मकान की छत पर था।

सेशन्स जज मि० सक्सेना अपनी जान हथेली पर रखे कमरे में कोच पर बैठे थे। उन्हें बचने की तनिक भी आशा नहीं थी। उन्हें पुलिस और जासूसों पर जरा भी विश्वास नहीं था।

कमरे के बाहर पुलिस का जाल बिछा था। सभी सतर्क थे।

तभी मि० शर्मा बदहवास-से वहाँ आये।

जज ने उन्हें देखकर सन्तोष की साँस ली।

बोले—'आपने तो बड़ी देर कर दी मि० शर्मा! एक-एक मिनट काटना हमारे लिए भारी हो रहा है....!

'मैं भी बड़ा परेशान हूँ मि० सक्सेना!....जेल में बड़ी आश्चर्यजनक घटना घट गई....मैं चन्द्रनाथ से मिला... तो उसने सारा भेद बताना मंजूर कर लिया....मैं जेलर के आफिस की ओर बढ़ा, आपको फोन करने के लिए कि बीच ही में रिवाल्वर की आवाज आई। दौड़कर गया तो देखा, किसी ने चन्द्रनाथ की जीभ काट ली है और उसके दोनों हाथ तोड़ डाले हैं!....'

'उफ्! क्या होगा मि० शर्मा!....न जाने क्या होना चाहता है!' जज उल्टी साँस लेने लगे—'आप क्या जेलर के आफिस तक नहीं पहुँच पाये थे....'

'जी नहीं...पाँच मिनट तो मुझे आते-जाते ही लग गये और पहुँचने के पहले ही.... जेलर का आफिस काल-कोठरी से दूर भी तो है....'

कमरे के ऊपर चारों ओर चार रौशनदान थे ! इन्हीं में से एक रौशनदान के पास छिपा हुआ लाल उपस्थित था। उसने अपना रिवाल्वर निकालकर हाथ में ले लिया था और रौशनदान की राह लक्ष्य कर रहा था।

तभी लाल चौंक पड़ा। उसने देखा, उसके सामने वाले दूसरे रौशनदान से निकला हुआ एक दूसरा रिवाल्वर भी जज की खोपड़ी का लक्ष्य कर चुका है।

लाल हैरान था ! दूसरे रौशनदान के पास कौन है, वह नहीं देख सकता था। क्या सरदार को उस पर विश्वास नहीं था जो उन्होंने दो व्यक्तियों को एक कार्य पर तैनात कर दिया ?

अभी लाल इस पर विचार ही कर रहा था कि—धायँ !

उस ओर के रौशनदान से आवाज आई और वह रिवाल्वर लुप्त हो गया। हत्या लाल के हाथों नहीं हो सकी फिर भी लाल को सन्तोष था कि कार्य पूरा हो गया। वह भागने की ताक में लगा।

नीचे बड़ा शोर मच गया। जज साहब की खोपड़ी टूट चुकी थी और उनके प्राण उड़ चुके थे। मि० शर्मा हाथ मल रहे थे और दाँत पीस-पीसकर सिपाहियों को हुक्म दे रहे थे।

'गोली रौशनदान से चलाई गई है....उधर देखो....दौड़ो जल्दी !' मि० शर्मा चिल्लाये।

सिपाही भागने-दौड़ने लगे। उसी समय रेखा दौड़ी आई।

बोली—'पिताजी ! दाई की तबीयत एकाएक खराब हो गई है, जल्दी चलिये...' तभी उसकी दृष्टि खून से लथपथ जज साहब की लाश पर पड़ी—'अरे ! चाचाजी को क्या हुआ ?....बाप रे बाप....' वह चीख पड़ी।

'रेखा !'—मि० शर्मा ने कहा—'तू किसी डाक्टर को लेकर घर जा....मैं अभी नहीं चल सकता...जज साहब का खून हो गया।'

रेखा की आँखों में आँसू आ गये, बोली—'आप यहाँ से चलिये, यहाँ खतरा है पिताजी !....'

मि० शर्मा ने प्यार से रेखा का सर सहलाया—'पगली ! ऐसा तो होता ही रहता है...तू घर चली जा ! डाक्टर को लेती जाना और दाई को ठीक से दवा देना....आज तो शायद मैं घर न आ सकूँ...'

रेखा चली गई। तभी सिपाही चिल्ला उठे—'वह है....वह भागा जा रहा है....'

छत-छत भागता हुआ लाल देख लिया गया। पुलिस ने भी छत ही छत उसका पीछा किया। आखिरी मकान पर पहुँच कर लाल धड़ाम से नीचे कूद पड़ा। छत नीची थी, अतः चोट अधिक नहीं आई।

पास ही खड़े दो सिपाहियों ने लाल को पकड़ना चाहा मगर लाल के रिवाल्वर ने उन्हें नीचे सुला दिया। दौड़कर लाल मोटर साइकिल पर जा चढ़ा। मोटर साइकिल भाग चली।

पुलिस वाले भी असावधान न थे। थोड़ी ही देर बाद लाल को मालूम हो गया कि एक कार पूरी तेजी से उसका पीछा कर रही है।

लाल ने अपनी स्पीड और तेज की। रात का समय, चारों ओर सन्नाटा !—लाल की मोटर साइकिल शहर का रास्ता छोड़ कर देहाती मार्ग पर भाग चली।

पीछे वाली कार काफी पीछे थी परन्तु उस पर से चलाई जाती हुई गोलियाँ लाल तक पहुँच रही थीं। डर था कि कोई गोली लाल की खोपड़ी न तोड़ दे।

सड़क पक्की थी। दोनों ओर लहलहाते हुए गेहूँ-जौ के खेत खड़े थे।

एक गोली आई और मोटर साइकिल की पिछली पहिया धड़ाके के साथ बर्स्ट हो गई। लाल भी गिरते-गिरते बचा। उसने मोटर साइकिल का मोह छोड़ दिया और तेजी के साथ बगल के खेत में घुसकर भागने लगा। गेहूँ के पौधे काफी बड़े थे। लाल को छिपकर भागने में विशेष असुविधा नहीं हुई। उसने अपना काला लबादा और नकाब उतार कर फेंक दिया।

भागने की धुन में उसे ध्यान ही न रहा कि पुलिस की एक गोली से उसका बाँया पैर जख्मी हो गया है। घाव साधारण ही था। गोली मांस छीलती हुई निकल गई थी।

पुलिस की कार लाल की बेकाम मोटर साइकिल के पास आकर रुक गई। टार्च के सहारे आस-पास के खेतों में प्रकाश फेंका जाने लगा। परन्तु लाल का पता न लगा।

लाचार पुलिस की कार लाल की बेकाम मोटर साइकिल लादकर लौट पड़ी।

जज की हत्या से सरकारी कर्मचारियों की नींद हराम हो गई थी। चारों ओर टेलीफोन-तार भेजे जा रहे थे। उच्च अधिकारियों को भी इस हत्या का समाचार भेज दिया गया था।

जब पीछा करनेवाले सिपाही निराश लौटे और उन्होंने मि॰ शर्मा को अपनी असफलता का हाल सुनाया तो वे उबल पड़े, कुछ भद्दी गालियाँ उन काठ के पुतलों को दे डालीं।

उधर घर पर रेखा दाई की तीमारदारी में परेशान हो रही थी।

'रेखा ओ रेखा!....'

'अब सो जाओ दाई! आधी रात तो बीत गई! चिल्लाती

रहोगी तो डाक्टर की दवा का असर कैसे होगा !'—रेखा पर लेटी-लेटी बोली।

'तुमसे उठा नहीं जाता !' बुढ़िया चीखकर बोली—'जिन्दगी बिता दी इसके पालने-पोसने में और आज जब खुद मरने लगी तो इसकी जबान को गरुड़पुरान सूझ रहा है....उठती है या नहीं।'

'लो उठ गई—बोलो, क्या कहती हो !' रेखा पड़े-पड़े ही बोली।

'एक गिलास पानी दे मुझे....' दाई ने कहा।

'जाड़े में इतना पानी पीती हो, तभी तो पेट में जाकर बर्फ बन जाता है...और तब लगती हो चिल्लाने पेट दर्द से....डाक्टर भी क्या खाक दवा करेगा !'

'अरे तू भी कभी बूढ़ी होगी !...तब देख लेना, चारपाई तेरे लिए चुम्बक न बन जाय तो कहना...पानी पिलाती है मुझे या नहीं...'

'देती हूँ दाई....तुम तो जैसे भूडोल मचा देती हो...'

रेखा ने उठकर बुढ़िया को पानी पिला दिया। एक घूँट पीते ही बुढ़िया चीख पड़ी—'भगवान भला करे इस लड़की का ! बूढ़ी को पानी भी देती है तो बर्फ डालकर...'

'बर्फ नहीं डाला है दाई ! नल का पानी है यह तो....तुम्हारे लिए कुआँ खोदकर पानी कहाँ से लाऊँ !'

'रेखा बेटी....' बाहर से मि० शर्मा ने पुकारा।

रेखा दौड़कर दरवाजा खोली—'आ गये पिताजी !'

'दाई की कैसी तबीयत है !' अन्दर आते हुए मिस्टर शर्मा ने पूछा।

'अब ठीक है....' रेखा बोली और दरवाजा बन्द कर अन्दर आई।

मिस्टर शर्मा सीधे अपने कमरे में चले गये। पीछे-पीछे रेखा भी आई। उसने देखा, आज उसके पिता का चेहरा अतिशय गम्भीर है।

'खाना लाऊँ पिताजी!'

'आज नहीं बेटी! इच्छा नहीं है, अब सोना चाहता हूँ...'

मिस्टर शर्मा पलंग पर जा पड़े।

● ●

सारा लखनपुर गाँव इस समय सो रहा है। छोटी-सी बस्ती है दस-बारह घरों की। सभी किसान हैं—बूढ़ा जियावन अभी तक जाग रहा है। चारपाई पर कथरी ओढ़े पड़ा हुआ हुक्का पी रहा है। जीर्ण-शीर्ण झोपड़ी बूढ़े के शरीर की तरह बूढ़ी हो चली है। दीपक का सारा तेल जल चुका है और उसकी लौ काँपते-काँपते आखिरी साँस ले रही है।

नयना की जवान आँखों में नींद खेल रही है लेकिन बाप से पहले वह सोना नहीं चाहती। बूढ़े के पायताने बैठकर वह उसका पैर दबा रही है।

गरीब बेटी की जवानी बाप के बुढ़ापे का साथ दे रही है। खेतों की मिट्टी में खेलते-कूदते नयना का बचपन जवान बना तो बूढ़े बाप को चिन्ता हो आई। बिना माँ की अकेली लड़की, अगर बाप ने कभी आँखें बन्द कर ली तो किसका सहारा लेगी बेचारी! बूढ़े ने अपना हुक्का जमीन पर रख दिया और आँखें बन्द किये यही सोच रहा था।

तभी दीपक की लौ एक बार काँप कर अन्धकार की गोद में बेहोश हो पड़ी।

'बापू...' नयना का स्वर इतना मीठा था जैसे दूर की अमराई से किसी परदेसी की बंशीध्वनि कानों में आ पड़ी हो।

'.........'

बूढ़ा चुप रहा! ध्यानमग्न, चिन्तित!

'सो गये क्या बापू?'

'ऊँ....नहीं तो बिटिया! क्या है?'

'नींद नहीं आ रही है बापू तुम्हें?....'

'अब क्या नींद आयेगी बेटी!....अब तो आयेगी वही महानिद्रा कि मोह माया सब कुछ छुड़ाकर बोलता पंछी उड़ा ले जायगी अपने साथ...'

'तुम कैसी बातें करते हो बापू!....' नयना ने कहा—'मुझे नहीं सुहाती ऐसी बातें....आज तुमने कुछ खाया भी नहीं। ऐसे कब तक चलेगा?....'

'अरी पगली! अभी तक तो दोपहर की लिट्टियाँ ही पेट में पत्थर बन रही हैं। पेट की आग भी तो जलते-जलते बूढ़ी हो चली बिटिया! अब क्या इतनी जल्दी-जल्दी पचेगा? तू ही क्यों नहीं खा लेती? मेरा मुँह कब तक देखती रहेगी?'

'मुझे भूख नहीं है बापू!...लिट्टियाँ हैं, कल खा लेंगे।'

फिर दोनों चुप हो रहे। नयना पैर दबाती रही, बूढ़ा पड़ा रहा।

'बापू!...मनोहर बड़ा वैसा आदमी है....'

'कौन मनोहर?—भोला का छोकरा...'

'हाँ बापू!....बड़ा वैसा...बहुत खराब है वह बापू। मुझसे ऐसी बातें कहता है, जो कभी किसी ने नहीं कहीं, उसे मना कर दो तुम बापू?....'

'क्या कहता है वह बेईमान?'

'मैं क्या जानूँ? मुझे देखकर न जाने क्या-क्या बकने लगता

है....कहता है, 'तुम चाँद हो' भला जमीन का इन्सान कभी आसमान का चाँद बन सकता है बापू ?'

'नहीं रे नहीं ! वह जो कहता है, उसका मतलब मैं समझता हूँ। कल उसे ठीक कर दूँगा....भोला ने छोकरे को नाक का बाल बना डाला है कि कोई छू भी न सके....मैं सब जानता हूँ। यह भोला भी कम नहीं है....'

'अब सो जाओ बापू !...रात बहुत बीत चली, मैं भी सोऊँ न !'

'हाँ, तू सो जा....'

बाप-बेटी सोने की चिन्ता में लगे। नयना तो पड़ते ही सो गई। बूढ़ा धीरे-धीरे खर्राटे भरने लगा।

घण्टे भर बाद झोपड़ी का दरवाजा किसी ने खटखटाया। नयना का थका शरीर जवानी की मीठी नींद में बेहोश था, परन्तु बूढ़े की पलकें उस आवाज से पिंजड़े के फाटक की तरह खुल गईं और नींद पंछी बनकर उड़ चली।

'नयना बिटिया !...'

मगर नयना न जगी, न हिली, न बोली। नींद क्या थी कि हिमालय की चट्टान बन गई थी....हटाये नहीं हटती थी।

बूढ़ा कराहते हुए उठा—'आता हूँ भाई !....जिन्दगी क्या है कि रात में भी न चैन, न आराम....और नयना तो ऐसी सो जाती है कि इसका बाप भी इस तरह घोड़े न बेचता रहा होगा।'

दरवाजा खोला तो बूढ़े को एक परदेसी दिखाई पड़ा।

'बाबा ! रात भर के लिए शरण दे दो....बड़ा उपकार होगा...पैर में चोट लगी है, चल नहीं सकता....आधी रात को किसे कहाँ पुकारूँ !...'

'मुझे पुकार लिया यही बहुत है !'—बूढ़े ने कहा—'रात भर ही क्यों, दो चार दिन रह सकते हो....आओ, अन्दर आओ.... नयना ! ओ बिटिया !...उठती है या नहीं....'

'उठ गई बापू !—कौन है, दीया जला दूँ !....'

'हाँ बिटिया, एक परदेसी मेहमान है....जला दे दीया—'

नयना ने दीपक में तेल डालकर उसे जलाया। क्षीण रोशनी झोपड़ी में फैल गई।

नयना ने परदेसी को देखा—पुष्ट शरीर, गर्द से भरे कपड़े, मुँह पर घनी दाढ़ी-मूछें।

और परदेसी ने नयना को देखा—गाँव की सुन्दरता—जैसे कीचड़ में कमल खिल आया हो, जैसे धूल के बीच हीरे का टुकड़ा हँस रहा हो।

'बाबा, यह तुम्हारी बेटी है ?' परदेसी ने पूछा।

'हाँ बेटा....अभी नासमझ है। नींद में होती है तो गाज गिरने पर भी नहीं उठती....आओ बैठो....'

परदेसी बैठ गया।

'तमाखू पीते हो ?....'

'नहीं बाबा !....'

'भूखे हो....'

'रहने दो बाबा ! इन्सान की भूख भी क्या कभी जा सकती है ? पेट न हो तो इन्सान पङ्गु बनकर बैठा रहे—इतनी रात में खाना भी क्या अच्छा लगेगा !....'

'देखो बेटा ! तुम यहाँ आ पड़े हो तो हमारा कर्त्तव्य निभेगा ही...रूखी-सूखी ही सही....नयना ! रोटियाँ रख छोड़ी है न ?.... ला दे मेहमान को...'

नयना चली गई।

'बाबा !...' परदेसी ने कहा—'तुमने मुझे शरण देकर मेरा बड़ा उपकार किया....मैं बहुत ऋणी हूँ तुम्हारा....'

'छोड़ो तुम इन सब बातों को....तुम्हारे पैर में चोट लगी है न ?'

'है तो, मामूली-सी....'

'लाओ देखूँ, हो सके तो पट्टी बाँध दूँ....'

परदेसी ने अपने पैर का घाव दिखा दिया। बूढ़ा दीपक की रोशनी में उस घाव को देर तक देखता रहा। उसकी आँखें आश्चर्य से फैलते-फैलते गुफा-सी बन गईं।

'बेटा !....यह घाव कैसे लगा तुम्हें ?'

'गोली से....'

'किसकी गोली ?' बूढ़े का स्वर कठोर था।

'पुलिस की....' परदेसी ने कहा।

'तुम चोर हो !....डाकू हो ! क्या हो तुम ?....कौन हो ?'

'मैं चोर-डाकू नहीं बाबा ! विश्वास करो मुझ पर...तुम कहो तो मैं अभी चला जा सकता हूँ....किसी पर बोझ बनने से क्या लाभ ?'

'परदेसी ! बोझ ढोते-ढोते ही मेरी जवानी का यह रूप हो गया है, तो जरा से बोझ से अब क्यों घबड़ाऊँगा....तुम चोर-डाकू नहीं हो तो रहो....पुलिस की क्या बात ! वह तो भले आदमियों की मौत बन रही है आजकल !....' कहकर बूढ़े ने परदेसी के पैर में पट्टी बाँध दी।

तभी नयना थाल में थोड़ी-सी रोटियाँ ले आई।

परदेसी खाने लगा—नयना खड़ी-खड़ी उसका खाना देखती रही।

'बापू !...' बोली वह—'परदेसी मेहमान को हमारा यह खाना पसन्द नहीं। शहरी दाँत जरा कमजोर होते हैं। गाँव का खाना कैसे अच्छा लगे ?'

'नहीं नयना ! तुमने बड़ी अच्छी रोटियाँ पकाई है....' बोला परदेसी—'अब तो दो-चार दिन रहकर ही टलूँगा...'

'अरे बेटा ! तुम हमेशा के लिए रुक जाओ तो हमारा बुढ़ापा कट जाय और मौत की अर्थी को दो कन्धे मिल जायँ....'

'परदेसी मेहमानों का क्या ठिकाना बापू! आज यहाँ तो कल वहाँ...' नयना ने कहा।

'ठीक कहती हो नयना तुम!' परदेसी बोला—'मेरा शरीर बिका न होता तो तुम लोगों के हाथ बेदाम बेच देता...फिर भी तुम लोगों की याद तो कभी-कभी करूँगा ही....'

खाना समाप्त हुआ तो नयना ने परदेसी के हाथ धुलाये।

परदेसी खाट पर सोया और नयना तथा उसका बूढ़ा बाप जमीन पर पड़ रहे।

रात बहुत थोड़ी रह गई थी। नयना की नींद टूटी तो फिर पलकों ने झपकने का नाम ही न लिया। वह परदेसी के विषय में सोचती पड़ी रही। परदेसी का सभी कुछ अच्छा लगा परन्तु उसकी दाढ़ी-मूँछें उसे पसन्द न आई थीं।

घण्टों तक जागती रहकर उसकी आँखें निद्रालु हुईं।

और जब नींद खुली तो काफी दिन चढ़ आया था। बूढ़ा रात रहे ही खेत पर चला गया था—परदेसी बेखबर सो रहा था।

नयना उठ बैठी। उसने परदेसी पर दृष्टि फेंकी तो उसकी आँखों को स्वप्न-सा दीखते लगा।

रात में परदेसी के मुख पर घनी दाढ़ी-मूँछें थीं परन्तु इस समय सलोना-सा जवान चेहरा दिखाई पड़ रहा था और दाढ़ी-मूँछें सरक कर एक ओर पड़ी थीं।

कितना सुन्दर था इस जादूगर परदेसी का नया चेहरा। नयना देखती रही एकटक, अपलक। आँखों में अगर पीने की ताकत होती तो वह उस सौन्दर्य को एक ही घूँट बना डालती।

आज नयना को न जाने क्या हो गया।

यह जादूगर उसके घर आया ही क्यों? जिसका चेहरा रात में दूसरा और दिन में दूसरा दिखाई पड़ता है।

नयना उठकर खड़ी हो गई और परदेसी की चारपाई के पास आ झुककर उसे ध्यानपूर्वक देखने लगी। आँखों की प्यास बुझती ही न थी और पीने की ताकत थी ही नहीं। कितनी विवशता थी कि नयना व्याकुल हो उठी।

वह चारपाई पर बैठ गई। हाथ से उसने परदेसी के गाल छुए तो परदेसी चौंक पड़ा। उसकी आँखें खुल गयीं। वह आश्चर्य में भरकर नयना को देखता रह गया।

'नयना !...' परदेसी उठ बैठा।

'परदेसी, तुम बहुत अच्छा जादू जानते हो !...' नयना ने चारपाई पर से नकली दाढ़ी उठाते हुए कहा—'तुम इन्हें अपने मुँह पर कैसे जमा लेते हो जी ?...'

अब परदेसी को ध्यान आया। उसने झपटकर दाढ़ी-मूँछें ले ली और अपने चेहरे पर तुरन्त लगा ली, बोला—'नयना यह बात किसी से मत कहना...'

'कौन-सी बात ?'

'इसी जादू की....'

'बापू से भी नहीं कहूँगी ?'

'नहीं, किसी से भी नहीं....हवा और पत्थरों से भी नहीं... समझ लो तुमने स्वप्न में देखा था।'

'नहीं कहूँगी परदेसी ! तुम जो चाहोगे वही करूँगी...अगर तुम जादू की दाढ़ी न लगाया करो तो तुम्हारा चेहरा बड़ा भला लगे....'

'सच !'

'सच परदेसी ! चाहो तो मेरी आँखों से पूछ लो। दिल तो तुम मेरा देख सकते नहीं, सुन सकते हो तो सुन लो...तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो। जी चाहता है हमेशा तुम्हारे साथ रहकर तुम्हारा जादू देखूँ...' नयना ने परदेसी का हाथ पकड़ लिया।

परदेसी उस स्पर्श से चौंका परन्तु उसने अपना हाथ हटाया

नहीं। नयना तो विभोर थी। भूली-भूली-सी परदेसी की आँखों में देख रही थी—'परदेसी तुम चले जाओगे ? चले जाओगे न....'

'आनेवाले को एक न एक दिन जाना ही पड़ता है नयना ! यह मजबूरी तो हर इन्सान के साथ है—'

'जिन्दगी में बहुत से लोग आते हैं मगर आँखों में बहुत कम बस पाते हैं परदेसी ! और जो आँखों में घर बना लेते हैं, वे जल्दी निकाले नहीं निकलते। ऐसा कभी तुम्हारे साथ भी हुआ है ?....'

'यह तो रोग है नयना ! इसका ईलाज बड़ा कठिन है !'—परदेसी ने कहा—'मुझे केवल एक ही रोग है और वह है देश की चिन्ता !...'

'अपने गाँव और देश की चिन्ता किसे नहीं होती परदेसी ?....और गाँव-देश में कुछ अपने लोग भी तो रहते हैं। उनका मोह क्या नहीं होता ?....'

'होता है, मगर देश प्रेम के आगे व्यक्ति का प्रेम याद नहीं पड़ता...'

'तुम पता नहीं क्या कहते हो !'—बोली नयना—'एक बात पूछती हूँ बताओगे न ?...तुम्हें एक पल देखकर ही पलकें निहाल हो गई हैं, ऐसा कैसे होता है भला ?...'

'इसे तो तुम ही जानो नयना !....'

'परदेसी ! तुम बड़े भोले हो...शहर में रहते हो मगर इतनी जरा-सी बात भी नहीं जानते ?....शहरी लड़कियों की भी ऐसी ही आँखें होती हैं ?'

'कैसी आँखें ?....'

'मेरी तरह, कि किसी को एक पल देखते ही पलकें निहाल.... परदेसी तुम न जाओ तो कैसा हो, हम लोगों के पास रहो तो हम भी खुश रहें। बापू तो बस तुमको अपना बना लें....'

'मेरा बहुत हर्ज होगा नयना !....'

'हर्ज तो होगा ही'—नयना ने कहा—'मगर मेरी खुशी जो मर जायगी तुम्हारे जाते ही....जाने दो परदेसी ! किसकी-किसकी खुशी का ख्याल करोगे तुम ? तुम्हारे तो बहुतेरे होंगे....मुझे तो एक तुम मिल पाये हो। चले जाओगे तो दिल पर रखने के लिए पत्थरों के कमी नहीं...'

नयना की आँखें बह चली।

परदेसी कैसे समझाये इस ग्रामीण बाला को ? उसने अपनी हथेली से नयना के नयन पोंछ दिये तो वह स्पर्श नयना को बड़ा ही सुखकर प्रतीत हुआ। उसने परदेसी का हाथ पकड़कर अपनी आँखों पर जोरों से दबा दिया।

'परदेसी !'

'बोलो नयना !'

'आँखों से आँसू क्यों बह चलते हैं ?'

'दिल पर जब कोई चोट लगती है तब आँखें बरस ही पड़ती हैं....' परदेसी ने कहा।

'चोट दिल पर लगती है और बरसती है आँखें !' नयना बोली—'तो क्या आँखों और दिल के बीच कोई डोर है परदेसी.... आँखों में आकर लोग दिल तक पहुँच जाते हैं ! क्या आँखों देखने से दिल की सूरत दिखाई पड़ सकती है ? अगर ऐसा है परदेसी, तो एक बार तुम मेरी आँखों में देखो...'

नयना ने अपने खुले नयन परदेसी की आँखों के सामने पसार दिये—'कुछ दिख पाया ?'

'मैं ही तो हूँ !'

'हाँ ? तुम्हीं हो....आँखों की डोर पकड़ दिल तक उतर आये हो और दिल तक जब आ चुके हो तो बाहर निकल नहीं पाओगे परदेसी ! गाँव के लोग किसी को घर में बसा, फिर बाहर नहीं निकालते। अपने से तुम भले ही चले जाओ। ठोकर मारने से

दूसरों को चोट तो लगती ही है मगर ठुकराने वाला क्या कभी रुकता है अपनी दी हुई चोट देखने के लिए !'

'नयना ! चाँद दूर आसमान पर हँसता है और देखकर लोग पाने की लालसा से जमीन पर खड़े हाथ मलते हैं, परन्तु इससे वह जमीन पर वालों को कैसे मिल पाये ! इतनी विवशता न हो तो दुनिया के लिए आँसू का मोल ही क्या !...'

'ठीक कहते हो परदेसी !....तुम चाँद हो और मैं जमीन की धूल....मगर यह न भूलो कि धूल भी हवा के साथ उड़कर कभी आसमान छूने का सपना देख सकती है और सपने हमेशा झूठे भी तो नहीं होते....'

'नयना !...' परदेसी ने नयना का सर सहलाकर कहा—'पता नहीं तुम मुझसे क्या चाहती हो ! मेरा परिचय जान जाओ तो डर से काँप उठो। पुलिस हमेशा मेरी खोज में पड़ी रहती है। मैं अगर अधिक दिनों तक यहाँ रहा तो तुम लोगों पर भी आफत आ सकती है...'

'आफत का नाम लेकर मुझे डराना चाहते हो परदेसी !.... कभी देख सको तो देख लेना कि तुम्हारे सामने नयना पर अगर बज्र भी गिर पड़े तो वह तुम्हें देखते-देखते सह लेगी, मुँह से कराह भी नहीं निकालेगी....'

'मैं मजबूर हूँ नयना ! तुम इतनी भोली हो कि मेरी मजबूरी बताने पर भी नहीं समझ सकोगी। अपने दिल को बहता पानी न बनाकर कठोर पत्थर बनाओ। पानी ढाल पाते ही बह चलता है, मगर पत्थर तो अपनी जगह पर अडिग रहता है...'

'परदेसी बाबू ! आँखों में अगर पानी की नदी उमड़े तो पत्थर का कलेजा भी बह निकलता है ! विश्वास न हो तो चलो, उस तरफ एक सोता है, तुम्हें दिखा दूँ....पत्थर की आँखों से निकला पानी मीठा होता है और इन्सान की आँखों का पानी

खारा ! पत्थर रोते हैं तो कितनों की प्यास बुझती है और इन्सान तो रोकर खुद अपने दिल की प्यास नहीं बुझा पाता....'

'नयना ! चलो सोते के किनारे चलकर बैठें...' परदेसी ने कहा।

'चलो !' नयना उठी ! परदेसी भी अपनी दाढ़ी-मूँछें ठीक करके उठ खड़ा हुआ।

दोनों झोपड़े से बाहर आये तो नयना की दृष्टि दरवाजे पर खड़े हट्टे-कट्ठे एक देहाती युवक पर पड़ी। वह चौंककर बोली—'मनोहर तू...'

'हाँ, हाँ, मैं ही हूँ। पहचानती नहीं क्या ?'

'कब से यहाँ खड़ा है।' नयना ने पूछा, अपने स्वर में रोष भरकर।

'बस यही थोड़ी देर से।' मनोहर बोला—'सोचा, तुझे पुकार कर मीठी बातों में दख्ल क्यों दूँ? हाँ नयना ! यह कौन है तेरे साथ ?....'

'मेहमान !' नयना ने कहा।

'मेहमान....' परदेसी को घूरते हुए मनोहर बोला—'तुम जरा दूर चले जाओ। मुझे नयना से कुछ बातें करनी हैं....'

'नहीं जी, तुम यहीं खड़े रहो—जो कहना है तुम्हारे सामने ही कहेगा...' नयना ने कहा।

'नहीं, नहीं, मैं हट जाता हूँ !'—कहकर परदेसी कुछ दूर पर जाकर खड़ा हो गया।

'बोल क्या कहता है ?'

'नयना ! हमसे आँखें मोड़कर यह किस दढ़ियल को बसा रही हो अपनी आँखों में ?'

'तुझे इससे क्या ?....मैं बहुत बार कह चुकी हूँ मनोहर ! मुझे तेरी बातें अच्छी नहीं लगतीं....ज्यादा दिक करेगा तो बापू से कह दूँगी....'

'अब और क्या कहेगी अपने बापू से....जो कहना था सो तो कह ही चुकी...आज सवेरे ही तेरे बापू मेरे यहाँ आये थे और आग बबूला होकर बापू से मेरी शिकायत कर गये। बापू ने दो-चार चाँटे मार लिए....मगर प्रेम की राह में दो चार चाँटे काँटे की तरह थोड़े ही चुभते हैं....'

'तू चला जा मनोहर! नहीं तो अच्छा नहीं होगा....'

'मैं जाता हूँ, मगर यह याद रख कि चम्पा में जब ज्यादा महक आ जाती है तो लोग उसे हरी-हरी डालों के बीच खोज कर तोड़ ही लेते हैं...तेरी महक भी अब क्या कम रंग ला रही है! बूढ़े बाप के बल पर मत ऐंठ। उसे तो जभी चाहूँ तभी.... हाँ....' कहकर मनोहर परदेसी पर एक तीव्र दृष्टि डालता हुआ चला गया।

नयना परदेसी के पास आई। दोनों साथ-साथ चलने लगे।

'कौन था वह नयना!....' पूछा परदेसी ने।

'था एक मनोहर का बच्चा! मुए ने नाक में दम कर रखा है। गाँव में खस की टट्टी भी नहीं कि दिन भर घर में बन्द रहूँ। जब निकलती हूँ तो न जाने कहाँ से आ पहुँचता है, जैसे शैतान दिन-रात मेरी छाया बना फिरता हो....वह बड़ा खतरनाक आदमी है परदेसी बाबू!....'

'यह तो उसकी शक्ल ही कहती है....'

'लो देखो, कितना अच्छा सोता है....कभी देखा है ऐसा अच्छा पानी?'

परदेसी चारों ओर का मनोहर दृश्य देख रहा था। पानी का स्वच्छ निर्झर मीठी-मीठी फुहारें फेंकता हुआ बह रहा था। देख कर परदेसी की आँखें तृप्त हो गईं।

दोनों एक चट्टान पर बैठे, बिलकुल पास-पास। नयना ने एक हाथ परदेसी के कन्धे पर रखकर अपना आधा बोझ उसके हवाले कर दिया।

'परदेसी ! तुम्हें यह जगह पसन्द है ?'

'बहुत...'

'और मैं ?'

'ऐसे स्थान पर तुम्हारा साथ भी अच्छा लगता है....'

'यह बेमन की बात कैसी परदेसी ? पत्थर के आँसू तुम्हारी नजरों में इतने कीमती हैं और जैसे मेरे आँसुओं का कुछ मोल ही नहीं ! बड़े कच्चे खरीददार हो बाबू !...'

'मैं ऐसे बाजार में कभी नहीं आया था नयना ! जहाँ मुझे खरीदने की जरूरत महसूस हो। मैं तो प्रकृति के बाजारों में घूमा हूँ, जहाँ की हर चीज बेदाम मिलती है। मातृभूमि का प्रेम भी मुझे बेदाम ही मिला है। अगर कभी कुछ मूल्य भी चुकाना पड़ा तो जान तक हाजिर रहेगी....'

'मातृभूमि को तुम इतना चाहते हो परदेसी !....'

'हाँ....'

'और मातृभूमि के बाद ?'

'उसके बाद सभी को चाहता हूँ...'

'मुझे भी तो ?....

'हाँ !....'

'मेरे अच्छे परदेसी !....' कहकर नयना ने परदेसी का हाथ अपने हाथों में लेकर दबाया।

• •

'हलो ! हाँ, शर्मा स्पीकिङ्ग !....अभी आया है ? लखनपुर में ? आप उसे रोक रखिये, मैं अभी आया....हाँ जमनापुर थाने का हल्का है....ठीक है....सब कुछ हो जायगा....आज ही शाम

को....जी हाँ ! बिलकुल ठीक ! ऐसा कभी नहीं हो सकता....जी, मैं कोशिश तो करूँगा ही...इसमें क्या शक है !'

मि॰ शर्मा ने फोन का रिसीवर रख दिया, फिर तेजी से कपड़े बदलने लगे। तभी रेखा आ पहुँची।

'कहाँ से आ रही है बेटी ?'

'लाल भैया के यहाँ गई थी'—बोली रेखा—'कल तीन बार गई थी और आज चार बार, मगर एक बार भी भेंट नहीं हुई... ये लाल भैया कभी-कभी गदहे की सींग हो जाते हैं पिताजी....'

'तो तू उस गदहे के पीछे क्यों परेशान रहती है ?....'

'देखिये न ! कल से ही शेक्सपीयर के साहित्य पर एक नोट लिखकर उनसे बहस करने को तैयार हूँ, मगर वे मिलें तब तो !...गये होंगे अपने गाँव, माँ से मिलने....आप कहाँ चल दिये पिताजी....'

'कलेक्टर साहब का फोन आया था, उन्होंने बुलाया है....'

'और यह क्या ?' रेखा की दृष्टि मेज पर रखी हुई खाने की थाली पर गई—'आपने पूरा भोजन भी नहीं किया पिताजी...'

'आधा ही खाया था कि फोन आ पहुँचा....'

'तो अब खाकर जाइये....'

'सरकारी नौकरी है बेटी !"—मि॰ शर्मा बोले—'वफादार नौकर के लिए काम पहले खाना बाद में....'

'जी हाँ, खाली पेट काम भी तो खूब होता है पिताजी.... पुलिसवालों को तो खाना ही न चाहिये। दौड़ने-धूपने के लिए पेट हल्का रहता है....' रेखा हँसने लगी।

'बड़ी शरीफ लड़की है'—हँसते हुए मि॰ शर्मा ने हैट उठाया और चल पड़े।

दस मिनट बाद ही वे कलेक्टर के कमरे में हाजिर थे।

'आइये मिस्टर शर्मा, बैठिये !'—कलेक्टर ने कहा।

पास ही मामूली पोशाक में एक जासूस खड़ा था।

'देखिये !'—बोला कलेक्टर—'ये गुप्ता साहब खबर लाये हैं कि लखनपुर गाँव में इन्हें एक बूढ़े किसान के घर एक दाढ़ी-मूँछ वाला सन्दिग्ध व्यक्ति दिखाई पड़ा है....'

'क्यों, यही बात है न मि० गुप्ता !'—मि० शर्मा ने पूछा।

'जी हाँ !'—जासूस ने कहा—'लखनपुर गाँव उस स्थान से केवल दो मील दक्षिण है, जहाँ जज साहब के हत्यारे की मोटर सायकिल पाई गयी थी....'

'ठीक है ! तुमने उस आदमी को देखा !'

'जी हाँ, देखने में हट्टा-कट्टा, मुँह पर घनी दाढ़ी-मूँछें, गाँव वालों से एकदम भिन्न मालूम पड़ा...मनोहर नाम के एक युवक ने बताया कि वह उस गाँव में पहले कभी नहीं आया था। उसकी कोई रिश्तेदारी भी वहाँ नहीं है। जज साहब की हत्या वाली रात ही वह वहाँ आया है....'

'ठीक है।' मि० शर्मा ने मुट्ठी मेज पर पटकते हुए कहा—'तुम ठीक खबर लाये हो...अभी मोटर सायकिल से जमनापुर थाने जाकर थानेदार से मिलो। मैं फोन पर उन्हें सभी बातें समझा देता हूँ...देखो सावधान रहना....'

'बहुत अच्छा !....' जासूस दोनों को सलाम ठोंककर बाहर चला गया।

'मि० शर्मा, आपका क्या खयाल है !' कलेक्टर ने पूछा।

'अगर धावा अचानक और ठीक मौके पर हुआ तो वह आसानी से गिरफ्तार हो जायगा ..'

'जज साहब की हत्या ने तो और हम लोगों के सर पर आफत ला दी है....सच कहता हूँ, अब तो रात में नींद भी ठीक से नहीं आती। कभी-कभी स्वप्न में भी क्रान्तिकारियों से मुठभेड़ करने

लगता हूँ....जागता हूँ तो बड़ी हँसी आती है...'

'मेरा भी वही हाल है साहब...' मि० शर्मा ने कहा—'आपका फोन मिलते ही आधा खाना छोड़कर भागा आया हूँ....अच्छा, मैं जरा जमनापुर थाने फोन कर लूँ....'

'बेहतर है....फोन उधर है....'

मि० शर्मा फोन के पास आये। रिसिवर उठाया, नम्बर मिलाया—'थानेदार साहब !....देखिये, मि० गुप्ता जासूस आपके पास गये हैं। उनसे आपको सारी बातें मालूम हो जायँगी। पता चला है कि आपके हलके के लखनपुर गाँव में ही जज साहब का हत्याकारी छिपा है....हाँ ! कोई बूढ़ा किसान है। नाम तो मिस्टर गुप्ता ही आपको बतायेंगे...जरूर। धावा तो करना ही पड़ेगा... पूरी ताकत से धावा हो। आज ही रात, आठ नौ बजे के लगभग, इसके पहिले नहीं—हाँ ! चाहे जैसे हो पता लगाना ही पड़ेगा.... असामी भागने न पावे—मेरी क्या जरूरत है वहाँ ? क्या आप काफी नहीं ?....हाँ हाँ, आप जो भी चाहें कर सकते हैं...लूट-पाट, आग लगाना, कोड़े मारना, गोली दागना....सब कुछ ! ऐसे समय जुल्म भी बहुत काम दे जाता है....समझ गये न !....नहीं भाई मि० गुप्ता तो गये ही हैं....थैंक यू !'

रिसीवर रख मि० शर्मा कलेक्टर के पास आये।

'सफलता की आशा तो बहुत है....देखिये क्या होता है !'—बोले वे।

'कुछ अक्ल काम नहीं करती मिस्टर शर्मा !....जहाँ तक मेरा विश्वास है, सरकार की इतनी बड़ी ताकत से लोहा लेने वाला कोई मामूली दिमाग का आदमी नहीं है। इस गिरोह का सरदार अवश्य ही कोई आश्चर्यजनक व्यक्ति है। देखिये हम उसे कब पकड़ पाते हैं...'

'अभी तो उसको पकड़ने का स्वप्न देखना बड़ा कठिन है

साहब ! जब कि उसके मामूली आदमी भी पकड़ में नहीं आ पाते ! इसी जज साहब के हत्यारे को देखिये, हम लोगों ने उसे चारों ओर से घेर लिया....मगर शैतान उतनी ऊँची छत से कूदकर भाग निकला...सिपाहियों ने पीछा भी किया। उसकी मोटर सायकिल बेकाम कर दी गई, फिर भी निकल ही गया। उसकी मोटर सायकिल भी ऐसी कि उसमें लाइसेन्स का प्लेट ही नहीं....'

× × ×

सन्ध्या के सितारे आसमान पर चमकने लगे हैं। गाँव वाले जगह-जगह आग जलाकर अपना बदन गर्म कर रहे हैं। नयना और परदेसी झोपड़े में हैं। बूढ़ा दोपहर का गया-गया अभी खेत से लौटा नहीं है।

'परदेसी बाबू, रुकोगे नहीं ?....'

'नहीं नयना !....कभी रुक सकने लायक हुआ तो जरूर तुम्हारे दरवाजे तक आऊँगा....'

'तो कब जा रहे हो तुम ?'....नयना की आवाज भींग चली थी।

'शायद कल सुबह चला जाऊँ'—परदेसी ने कहा।

तभी—'बच्चा ! बूढ़े को भीख मिल जाय !'—दरवाजे पर से आवाज आई।

परदेसी चौंक पड़ा। दौड़कर बाहर आया। बूढ़ा भिखारी खड़ा था एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाते हुए।

'कौन है परदेसी ?' नयना भी पीछे-पीछे आ गई।

'भिखारी है नयना ! कुछ हो तो लाकर दे दो।'

नयना भीतर जाकर दीपक जलाने लगी—भिखारी परदेसी

के निकट आ गया। बोला—'बेटा लाल ! जरा भी समय नहीं है। जमनापुर से पुलिस चल चुकी है। तुम भागो यहाँ से... अभी भागो....लो ये कपड़े, रास्ते में पहन लेना। दाढ़ी-मूँछें फेंक देना....उधर बरगद के पीछे एक साइकिल रखी है....जल्दी करो लाल...'

तभी भीख लेकर नयना आ पहुँची। बोली—'क्या कह रहा है यह भिखारी परदेसी !....'

'कुछ नहीं, बेचारा दिन भर का भूखा है....'

भिखारी भीख लेकर दुआयें देता हुआ चला गया। नयना और लाल अन्दर आये।

'मैं चल रहा हूँ नयना !....' लाल ने कहा।

'तुम तो कल सबेरे जाने को कह रहे थे परदेसी ! रात के अँधेरे में ठोकर खा जाओगे। रुक जाओ, दिन के उजाले में चले जाना....'

'नहीं नयना ! मैं इसी समय जाऊँगा। मुझे रोकोगी तो बहुत बुरा होगा....'

'परदेसी ! नहीं रुकोगे तो रोकूँगी भी नहीं....कल बसन्त की बहार लेकर आये, आज पतझड़ देकर जा रहे हो, इसे याद रखना। दूर देश में कभी मेरी छाया झाँके तो याद कर लेना—बस !....'

'नयना ! मैं तुम्हारा उपकार कभी नहीं भूल सकूँगा।'

'निर्मोही ! नयना के उपकार को याद करके क्या करोगे ! नयना की याद आये तभी समझूँगी कि मेरी आँखों के आँसू सफल हुए, नहीं तो समझ लूँगी कि खारे जल से नहलाने पर पत्थर के देवता नहीं पसीजते...'

'मैं चलूँ नयना ! मुझे देर हो रही है....'

'जाओ ! आँखों से दूर हो रहे हो मगर दिल से भी निकल

जाओ तब जानूँ....'

लाल दरवाजे की ओर बढ़ा। नयना ने असीम वैकल्य से भर अपने हाथ कलेजे पर दाब लिए—'परदेसी !....जरा सुन लो !....'

लाल रुक गया—'क्या कहती हो नयना !....'

'कहने को तो बहुत है परदेसी ! मगर कहूँगी सिर्फ एक बात !....एक बार....केवल एक बार परदेसी, तुम अपनी जादू की दाढ़ी हटा कर अपनी वह जादू भरी सूरत दिखा दो ! बड़ा उपकार मानूँगी बाबू !....तुम्हें बाँध न सकी तो तुम्हारी सूरत ही बाँध कर रखूँगी नयनों में....'

'लो देखो !....'

लाल ने दाढ़ी-मूँछें हटाकर नयना को अपनी असली सूरत दिखाई। नयना विभोर होकर देखती रही। आँखों से आँसुओं की धारा बहती रही—'मेरे परदेसी ! मेरे बाबू !....' दौड़कर नयना लाल से लिपट गई।

लाल उसका सर सहलाने लगा। उसकी काली लटों का चुम्बन लेकर बोला—'नयना, चुप रहो तुम !....'

उसने अपनी दाढ़ी-मूछें लगा ली और तेजी से बाहर निकल गया। नयना आँखों में सागर और दिल में आग लिए चारपाई पर गिर पड़ी।

उधर लाल चला जा रहा था तेजी के साथ, कभी-कभी दौड़ भी पड़ता था। कुछ दूर जाकर उसने अपनी दाढ़ी-मूँछें उतार फेंकी और कपड़े बदल डाले।

भिखारी के कथनानुसार बरगद के पीछे एक सायकिल भी मिल गई। अब क्या था, अँधेरी रात थी और सुनसान पगडण्डी। रास्ता ऊबड़-खाबड़ जरूर था मगर लाल के पैरों का जोर पाकर सायकिल पूरी तेजी के साथ भाग रही थी।

एकाएक साइकिल की पिछली पहिया खड़खड़ाने लगी। लाल उतर पड़ा। देखा, हवा निकल गई थी। रात के समय पंचर बने तो कैसे, लाचार वह पैदल ही सायकिल को ठेलता आगे बढ़ा।

पगडण्डी के दोनों ओर दीर्घाकार वृक्ष थे, जिससे और भी अन्धकार हो रहा था। लाल को अगर डर था तो केवल यह कि पुलिसवाले उसे देख न लें।

'खबरदार रुक जाओ !...' स्वर सुनते ही लाल चौंककर रुक गया। बगल में पेड़ों के पीछे से खड़खड़ाहट हुई और दूसरे ही क्षण लाल के चारों ओर पचासों पुलिसमैन आ खड़े हुए।

एक टार्च तीव्र प्रकाश फेंकती हुई लाल के मुख पर जल उठी और रोबीला स्वर सुनाई पड़ा—'कौन हो तुम...कहाँ से आ रहे हो।'

'आप लोग कौन हैं....'

'पुलिस के आदमी....मैं जमनापुर थाने का थानेदार हूँ !'

'मेरा नाम लालचन्द है और मैं मि० शर्मा के बगल में रहता हूँ...' लाल ने निशङ्क स्वर में उत्तर दिया।

'आप कहाँ से आ रहे हैं ?....' प्रश्न हुआ।

'अपने गाँव गया था...' लाल बोला—'रास्ते में सायकिल पञ्चर हो गई। बड़ी दूर से पैदल ही चला आ रहा हूँ....अगर आप लोगों के पास सामान हो तो मेरी मदद कर दें। बड़ी कृपा होगी !....'

'देखिए ! हम लोग एक हत्याकारी के पीछे पड़े हैं...' थानेदार ने कहा—'आपको हमारे साथ चलना होगा। हम मि० शर्मा से आपका परिचय जानकर ही आपको रिहा कर सकते हैं....'

थानेदार ने कुछ इशारा किया। दो सिपाही लाल के दोनों तरफ आ खड़े हुए। सभी लोग लखनपुर गाँव की तरफ तेजी से चल पड़े।

लाल समझ रहा था कि वह एक तरह से कैद में है, फिर भी उसे सन्तोष था कि लखनपुर में नयना को छोड़कर और कोई उसे उस रूप में नहीं पहचान सकता और नयना उसे पहचान कर भी अपनी जबान में ताला बन्द कर रखेगी।

लखनपुर आ गया। पुलिस की एक टुकड़ी दूसरे रास्ते से वहाँ पहले ही पहुँच चुकी थी और उसने गाँव के चारों ओर घेरा डाल दिया था। गाँव के सभी बाल-वृद्ध एक कतार में खड़े किए गए थे और पुलिसवाले डरा-धमकाकर उनसे पूछ रहे थे। तभी यह टुकड़ी भी पहुँच गई।

'कुछ पता लगा नायब साहब!' थानेदार ने पूछा।

'जी नहीं! हम पूरे गाँव की तलाशी ले चुके हैं....इसने उस आदमी को देखा था....' नायब ने एक ग्रामीण की ओर इशारा कर दिया।

थानेदार उसके पास आया, पूछा—'तुम्हारा नाम?'

'मनोहर सरकार! मैंने देखा था माई-बाप! झूठ नहीं कहता...जियावन काका के घर में वह कल रात और आज दिन भर तक रहा।'

'ठीक है...' कहकर थानेदार बूढ़े जियावन की ओर बढ़ा।

मनोहर के बगल में ही नयना खड़ी थी और उसके सामने थोड़ी दूर पर खड़ा था लाल—दो पुलिसमैनों के बीच में। नयना ने उसे देखा, पहचान भी गई एक ही नजर में फिर भी उसने अपनी नजरें इस तरह से घुमा ली थी जैसे वह आदमी उसके लिए एकदम अपरिचित हो।

'नयना!...' मनोहर ने फुसफुसाते हुए नयना का हाथ पकड़ कर कहा।

'क्या है?....' नयना भी धीरे से ही बोली।

'वह आदमी डाकू था...शाम तक उसे मैंने तेरे साथ देखा

था....तू जरूर जानती है कि वह कहाँ भागा है। अगर मैं पुलिस से यह बात कह दूँ तो वह तुझसे अच्छी तरह समझ ले...बोल! मेरी बनेगी या नहीं?....'

'तेरी बने मेरी जूती....चुप रह, नहीं तो मैं चिल्ला पड़ूँगी....' नयना ने कहा।

थानेदार जियावन के सामने खड़ा था।

'क्यों बूढ़े! वह आदमी कौन था?'

'क्या जानूँ सरकार। परदेसी समझकर ही जगह दे दी थी... जानता होता कि वह ऐसा आदमी है तो कभी टिकने नहीं देता...' बूढ़े ने कहा।

'वह गया कब?'

'शाम को खेत पर से जब मैं लौटा तो बिटिया ने बताया कि वह चला गया....'

'इसकी बेटी कौन है?' थानेदार ने ऊँची आवाज में पूछा।

तो नयना सामने आ खड़ी हुई। थानेदार ने गौर से देखा।

'क्यों री छोकरी! तू उस आदमी को जानती है?....'

'यह जरूर जानती है सरकार!' मनोहर चिल्लाया—'वह इसका चहेतू था। खूब घुल-मिलकर रहते थे दोनों....'

'यह बात है!' थानेदार ने कहा—'नायब साहब! गाँववालों को जाने दें, सिर्फ इस बूढ़े और छोकरी को रोक लें....'

भीरु ग्रामीण आज्ञा पाते ही उड़ गये।

'देखो!...' थानेदार ने नयना और बूढ़े से कहा—'वह आदमी डाकू और खूनी है। उसका पता बता दोगे तो काफी ईनाम मिलेगा...'

'सरकार! जानता होता तो जबान खोल देता...मैं कुछ भी नहीं जानता हजूर। दुहाई है सरकार के इकबाल की....'

'चुप रह! तू शायद नहीं जानता बूढ़े कि उसे अपने घर में

रखकर तूने कितना बड़ा जुर्म किया है....अब से भी अच्छा है कि बता दे, नहीं तो इसका नतीजा बहुत बुरा होगा....'

'जो हो सरकार ! मर्जी आपकी....हम बेकसूर हैं—उसका नाम तक तो जानते ही नहीं....'

'तू भी कुछ नहीं बतायेगी छोकरी....'

'मैं क्या जानूँ सरकार !' नयना ने कहा।

'ये ऐसे नहीं मानेंगे....' नायब ने कहा—'लात के देवता बात से नहीं मानते....'

'ठीक है...' थानेदार बोला—'दानसिंह ! तुम जरा इस बूढ़े की झोपड़ी मशाल से गर्म कर दो....'

एक सिपाही मशाल लेकर आगे बढ़ा। घास-फूस की झोपड़ी मशाल चूमकर ज्वाला फेंकने लगी। सारा गाँव लाल लपटों से उजला हो उठा।

बूढ़ा अपने बुढ़ापे की छाँह को धुआँ बनते देखता रहा चुपचाप, नयना भी निश्चल रही ! लाल भी स्तब्ध खड़ा रहा।

'अब भी नहीं बतायेगा ?' थानेदार गरजा—'दो आदमी इस छोकरी के पाँव पकड़ लो और दो आदमी दोनों हाथ....हाँ ठीक है....अब खींचो अपनी ओर....देखो गिरने न पाये...'

नयना चीखने लगी। बूढ़ा राम-राम जपने लगा। नयना की असहाय दृष्टि एक क्षण के लिए लाल की आँखों से मिली। लाल ने अपने नेत्र बन्द कर लिए।

'और खींचो !....' थानेदार चिल्लाया।

जलती झोपड़ी की लपटें नयना की चीखों से काँपने लगीं। लाल दाँत पीस रहा था। उस भोली बालिका का अपने लिए असीम त्याग देखकर उसका क्रान्तिकारी हृदय डिग उठा था।

'छोड़ दो उसे....अब इस बूढ़े को पेड़ पर उल्टा टाँग कर कोड़े लगाओ....'

कोड़े लगने लगे! चार-पाँच बार तक तो बूढ़ा चिल्लाया फिर चीख बन्द हो गयी। कोड़े बराबर बरसते रहे।

'ठहरो....' थानेदार ने कहा—'अरे! यह बूढ़ा मर गया क्या? नायब साहब देखो तो....'

नायब ने देखा। बोला—'जी हाँ....'

नयना रोने लगी। थानेदार ठठाकर हँसा—'चलो सब लोग....बूढ़े की लाश भी ले लो....इस छोकरी को हिफाजत से ले चलो....'

नयना जमनापुर थाने लाकर हवालात में बन्द कर दी गई।

लाल यद्यपि कैद में नहीं था फिर भी उसकी कोठरी के दरवाजे पर एक सिपाही तैनात था। दूसरे दिन प्रातःकाल लाल थानेदार के सामने पेश किया गया।

'बैठिये!...' थानेदार ने कुर्सी की ओर इशारा किया।

लाल बैठ गया।

'आपका कहना है कि आप मि० शर्मा के पड़ोसी हैं?'

'जी हाँ, उनकी बेटी रेखा मेरी मित्र हैं....' लाल ने कहा।

'ठीक है!...' बोला थानेदार—'मिस्टर लालचन्द! आपको हम मि० शर्मा के पास भेज रहे हैं। वे जो उचित समझेंगे करेंगे....'

'बड़ी कृपा होगी आपकी!'

'देखिये आप बुरा न मानेंगे!' थानेदार ने कहा—'हमारा कर्तव्य बड़ा भयानक होता है। आपको जो कष्ट हुआ, उसके लिए माँफी चाहता हूँ....हम भी तो पराधीन ठहरे। कल गाँव में जो कुछ भी जुल्म किया गया, उसकी हमें आज्ञा मिल चुकी थी.... आप चाय तो पीते ही होंगे?'

'इसके लिए धन्यवाद! आप कष्ट न करें....मैं जल्द से जल्द डेरे पर पहुँचना चाहता हूँ....'

'अच्छी बात है....ओ दानसिंह !'

'हाजिर !...' लम्बा-चौड़ा सिपाही आ खड़ा हुआ।

'देखो, तुम मिस्टर लालचन्द को लेकर एस० पी० साहब के पास जाओ और उनसे कल की सारी घटना बता देना....और उस छोकरी के बारे में जो कुछ हुक्म हो जल्द लेकर आना....'

'जो हुक्म !...'

दानसिंह लाल को लेकर एस० पी० साहब के यहाँ रवाना हुआ।

• •

'पिताजी ! देखिए न, लाल भैया अभी तक नहीं आये....सौ बार तो दौड़ चुकी, ताला बन्द तो बन्द....छत पर से कूद कर जाती हूँ तो बिगड़ते हैं....आज तो मैं आपसे ही शेक्सपीयर के साहित्य पर बहस करूँगी ...' चाय पीते-पीते रेखा बोल रही थी।

'तू तो पता नहीं किस चीज की बनी है रेखा !....' मिस्टर शर्मा ने कहा—'साहित्य की बात तो लाल ही तुझसे कर सकता है....नेपोलियन की बहादुरी पर बहस कर तो मैं तैयार हूँ....'

'आप इतिहास जानते हैं पिताजी....'

'क्यों नहीं, बी० ए० में मैंने हिस्ट्री ही ले रखी थी....'

'अच्छा तो ये अंग्रेज हिन्दुस्तान में कब आये, कैसे आये, क्यों आए ! १८५७ का गदर क्यों हुआ, कैसे हुआ !.... बताइए...'

'चुप रह रेखा ! अंग्रेज चाहे जैसे आये, उनका शासन यहाँ पर होना बहुत जरूरी था....उनके आने के पहले यह देश फूट

और वैमनस्य से बर्बाद हो रहा था। आज तो शेर और बकरी साथ-साथ पानी पीते हैं....'

तभी चपरासी ने आकर जमनापुर थाने से एक पुलिसमैन के आने की सूचना दी।

तुरन्त दानसिंह और लाल पेश किये गये।

लाल को देखते ही रेखा चीख पड़ी—'लाल भैया! आ गये तुम!...'

'मैं कैद में हूँ रेखा!....' लाल ने कहा।

'कैद में!...पिताजी इन्हें किसने कैद किया!....'

'क्या बात है!....' मि० शर्मा ने दानसिंह से पूछा।

'कल ये साहब लखनपुर से एक मील उत्तर पर हमें पञ्चर साइकिल लिए पैदल आते हुए मिले थे। थानेदार साहब ने इन्हें रोक लिया था....' दानसिंह ने कहा।

'मैं अपने गाँव गया था बाबूजी! लौटते वक्त पहिया पञ्चर हो गई। लाचार पैदल ही आ रहा था कि पुलिस के हाथ पड़ गया...'

'अजी! यह लड़का तो मेरा पड़ोसी है। नाहक ही परेशान किया बेचारे को!....' मि० शर्मा ने दानसिंह से कहा।

'हजूर, माफ करें....हम कर ही क्या सकते थे?'

'लाल बेटा! तुम जाओ...'

'चलो रेखा! चलती हो!....'

'चलो न, मैं तो सौ बार जाकर लौट आई हूँ...'

लाल और रेखा चले गये।

'कल का हमला कारगर हुआ कि नहीं!....' मि० शर्मा ने दानसिंह से पूछा।

'जी नहीं! धावा हुआ तो बड़ी सरगर्मी से मगर कुछ हाथ

'अच्छी बात है....ओ दानसिंह !'

'हाजिर !...' लम्बा-चौड़ा सिपाही आ खड़ा हुआ।

'देखो, तुम मिस्टर लालचन्द को लेकर एस० पी० साहब के पास जाओ और उनसे कल की सारी घटना बता देना....और उस छोकरी के बारे में जो कुछ हुक्म हो जल्द लेकर आना....'

'जो हुक्म !...'

दानसिंह लाल को लेकर एस० पी० साहब के यहाँ रवाना हुआ।

• •

'पिताजी ! देखिए न, लाल भैया अभी तक नहीं आये....सौ बार तो दौड़ चुकी, ताला बन्द तो बन्द....छत पर से कूद कर जाती हूँ तो बिगड़ते हैं....आज तो मैं आपसे ही शेक्सपीयर के साहित्य पर बहस करूँगी ...' चाय पीते-पीते रेखा बोल रही थी।

'तू तो पता नहीं किस चीज की बनी है रेखा !....' मिस्टर शर्मा ने कहा—'साहित्य की बात तो लाल ही तुझसे कर सकता है....नेपोलियन की बहादुरी पर बहस कर तो मैं तैयार हूँ....'

'आप इतिहास जानते हैं पिताजी....'

'क्यों नहीं, बी० ए० में मैंने हिस्ट्री ही ले रखी थी....'

'अच्छा तो ये अंग्रेज हिन्दुस्तान में कब आये, कैसे आये, क्यों आए ! १८५७ का गदर क्यों हुआ, कैसे हुआ !.... बताइए...'

'चुप रह रेखा ! अंग्रेज चाहे जैसे आये, उनका शासन यहाँ पर होना बहुत जरूरी था....उनके आने के पहले यह देश फूट

और वैमनस्य से बर्बाद हो रहा था। आज तो शेर और बकरी साथ-साथ पानी पीते हैं...'

तभी चपरासी ने आकर जमनापुर थाने से एक पुलिसमैन के आने की सूचना दी।

तुरन्त दानसिंह और लाल पेश किये गये।

लाल को देखते ही रेखा चीख पड़ी—'लाल भैया! आ गये तुम!...'

'मैं कैद में हूँ रेखा!....' लाल ने कहा।

'कैद में!...पिताजी इन्हें किसने कैद किया!....'

'क्या बात है!....' मि० शर्मा ने दानसिंह से पूछा।

'कल ये साहब लखनपुर से एक मील उत्तर पर हमें पञ्चर साइकिल लिए पैदल आते हुए मिले थे। थानेदार साहब ने इन्हें रोक लिया था....' दानसिंह ने कहा।

'मैं अपने गाँव गया था बाबूजी! लौटते वक्त पहिया पञ्चर हो गई। लाचार पैदल ही आ रहा था कि पुलिस के हाथ पड़ गया...'

'अजी! यह लड़का तो मेरा पड़ोसी है। नाहक ही परेशान किया बेचारे को!....' मि० शर्मा ने दानसिंह से कहा।

'हजूर, माफ करें....हम कर ही क्या सकते थे?'

'लाल बेटा! तुम जाओ...'

'चलो रेखा! चलती हो!....'

'चलो न, मैं तो सौ बार जाकर लौट आई हूँ...'

लाल और रेखा चले गये।

'कल का हमला कारगर हुआ कि नहीं!....' मि० शर्मा ने दानसिंह से पूछा।

'जी नहीं! धावा हुआ तो बड़ी सरगर्मी से मगर कुछ हाथ

नहीं लगा !....' दानसिंह ने कहा—'जुल्म भी किया गया, बूढ़े की जान भी चली गई मगर असामी हाथ न आया और न तो उसकी बेटी ने उसका पता बताया....'

कहकर दानसिंह ने सारी घटना ब्योरेवार सुना दी।

सुनकर मि० शर्मा बोले—'तुम लोगों का अनुमान है कि वह लड़की फरार को अच्छी तरह जानती है मगर बताती नहीं ?'

'जी हाँ हजूर !...'

'तब तो उस लड़की का कलेजा बहुत सख्त मालूम पड़ता है, जो अपने प्रेमी के लिए अपने बाप को भी मरते देख सकती है....'

'बड़ी चालबाज लड़की है हजूर !'

'तुम जाओ और थानेदार साहब से कहना कि उस लड़की को सख्त पहरे में रखे...मैं जल्दी ही उसके बारे में अपना हुक्म भेजूंगा...समझ गये न ?'

दानसिंह सलाम करके चला गया। मि० शर्मा कुछ देर तक न जाने क्या सोचते रहे, फिर एक कागज पर कुछ लिखने लगे।

लिखकर उन्होंने कागज जेब में रखा, फिर पुकारा—'दाई ! मैं काम से बाहर जा रहा हूँ। खाने का समय हो जाय तो रेखा को बुलाकर खिला देना, नहीं तो शैतान शाम तक बहस ही करती रह जायगी लाल से....'

मि० शर्मा चले गये।

उधर लाल के कमरे में लाल और रेखा में झड़प हो रही थी।

'तुम क्यों चले गये थे !....'

'माँ को देखने गया था रेखा !....तुम्हें बता नहीं सका... नाराज मत हो इस जरा-सी बात पर...'

'इतनी बार तुम्हारे बन्द दरवाजे तक दौड़ी, जैसे मेरे पैर न हुए लोहे के टुकड़े हो गए कि दर्द ही न करें....'

'दर्द हो रहा हो तो लाओ पैर दबा दूँ....'

'रहने दो जी! बड़े आये हो जले पर नमक छिड़कने वाले!....चाहे कहीं भी जायँ आकर झट बहना कर देंगे कि गाँव गया था....लाल भैया! रेखा को इतनी भोली मत समझना... बताओ तो, गाँव गये थे न? माँ कैसी है?'

'बिल्कुल अच्छी!....'

'बिल्कुल गलत!....जाड़े के मौसम में बूढ़े लोग कभी स्वस्थ नहीं रह सकते....कम से कम जुकाम-खाँसी की शिकायत तो रहती ही है....'

'माँ को खाँसी का रोग तो बहुत पुराना है रेखा!'

रेखा एकाएक चुप होकर गम्भीर बन गई। लाल को उसकी यह गम्भीरता खटकी। आजकल रेखा में बहुत-कुछ परिवर्तन देख रहा था वह।

'क्या सोच रही हो!....'

'सोच रही हूँ कि तुम्हें कभी मुझ पर विश्वास होगा भी या नहीं....कभी तुम मुझे अपना हमदर्द समझोगे या नहीं!....'

'तुम्हारे और माँ के सिवा मेरा अपना है ही कौन रेखा!... तुम चाहे जो समझो, मेरा विश्वास तो तुम्हारे प्रति कभी शिथिल नहीं हुआ।'

'रहने दो लाल भैया। मुँह देखकर बातें करने की आदत अच्छी नहीं...घर जाने लगते तो रेखा तुम्हारे पैर में बेड़ी न डाल देती....कहकर जाना मंजूर न था तो बहाना बना दिया या घर जाने के बहाने कहीं और चले गये, कौन ठिकाना तुम्हारा!— खैर छोड़ो इन बातों को....चाय बना दूँ!....पियोगे तो!....'

'रहने दो रेखा! क्यों तकलीफ करोगी!...'

'लाल भैया! प्याले में जहर नहीं घोल दूँगी....विश्वास रखो

पिताजी भले ही जज साहब के खूनी की खोज करें, रेखा तो जानकर भी अनजान ही बनी रहेगी....'

'रेखा, मेरी तबीयत खट्टी हो गई तुम्हारी बातों से...'

'चाय पी लो भैया ! चीनी जरा ज्यादा कर दूँगी तो खट्टापन जाता रहेगा....'

लाल के खीझने पर ध्यान न देकर रेखा उठी और स्टोव जलाकर चाय बनाने लगी। कुछ देर तक दोनों चुप रहे। स्टोव तेजी से जलता रहा। रेखा आग की लपटें देखती रही।

'लाल भैया....आग की ये लपटें देख रहे हो न !...'

'देख तो रहा हूँ, अन्धा हूँ क्या !....'

'इन्सान के दिल में भी कभी ऐसी लपटें उठ सकती हैं लाल भैया !...'

'तेरे दिल में ही उठती होगी पागल लड़की !....'

'जो कहो लाल भैया ! पागल ही सही...अगर मेरे दिल में लगी हुई आग को देख पाते तुम तो कहते कि मैं क्या नहीं हूँ.... जो आँखें बन्द कर ले और देखना न चाहे उसे आग की एक छोटी-सी लपट तो क्या सूर्य का गोला भी अँधेरा नजर आयेगा... है न लाल भैया !....'

'चाय का पानी खौलकर बहा जा रहा है और तू बात बनाने बैठी है... हट ! मैं बनाये लेता हूँ !'

रेखा ने चाय की पत्ती डालकर केतली उतार ली।

थोड़ी देर बाद दोनों मेज पर बैठे चाय पी रहे थे।

'रेखा ! तू मुझसे ऐसी बातें मत किया कर !....' लाल बोला।

'कैसी बातें लाल भैया !'

'यही पागलों जैसी....'

'पागलों की बातों का भी कुछ तो अर्थ होता ही है लाल

भैया ! जो न समझे उसे कौन समझाये ?....अगर तुम्हें मेरी बातें अच्छी नहीं लगती तो मैं अब कुछ न कहूँगी कभी...हाँ तुमने एक बात सुनी या नहीं ?....शायद न सुन सके हो, क्योंकि उसी दिन तो तुम अपने गाँव चले गये थे...'

'कौन-सी बात ?'

'वही जज चाचा जो थे....उनको किसी ने गोली मार दी....'

सुनकर लाल चौंक पड़ा मगर चुप रहा। इस वाचाल लड़की से क्या बहस करे ?

'भला उन्हें किसने गोली मारी होगी लाल भैया !....'

'मैं क्या जानूँ ...' लाल उबलकर बोला।

'पिताजी वहाँ मौजूद थे, जज चाचा के एकदम पास !....अगर गोली जरा-सी बहक जाती तो उन्हें जा लगती...मगर गोली चलाने वाला नौसिखुआ तो था नहीं....है न लाल भैया !....'

'हाँ है तो...अच्छा चुपचाप चाय पी ले अभी, चल उठ !...'

'लाल भैया ! बुरा न मानो !'–रेखा गम्भीर होकर बोल रही थी—'तुम तो इतने ऊपर उठ चुके हो कि तुम्हें जमीन की हर चीज बहुत छोटी नजर आती है....तुम दूर आसमान पर उड़ो और मैं जमीन पर चलकर तुम्हारी छाया पकड़ूँ, यह अब मुझसे नहीं होगा। मुझे भी अपने साथ ले चलो लाल भैया ! मुझे भी उड़ने की शिक्षा दो...मुझे भी महान बनाओ...मुझे तुम कब तक ठुकराते रहोगे ?....' रेखा ने लाल के कन्धे पर अपना सर टेक दिया।

लाल उसका सर सहलाने लगा। बोला—'ठोकरों से घबड़ा मत रेखा ! 'सुर्खरू होता है इन्साँ ठोकरें खाने के बाद'....हिना जैसा रङ्ग लाना हो तो पत्थर पर अपनी जान पटक दो....देखो रङ्ग आता है या नहीं...'

'तुम कभी अजमाओ तो लाल भैया !'—रेखा का स्वर रुद्ध हो गया था—'तुमने सुना है कि नारी का कलेजा पानी-सा तरल

होता है परन्तु क्या तुमने किसी नारी का हृदय टटोल कर देखा है !...पुरुष सबल हुआ तो नारी की प्रेरणा उसे और सशक्त करती है। अगर पुरुष निर्बल हुआ तो नारी स्वयं भी बलहीन हो जाती है....जो नारी तुम जैसा बेटा पैदा कर सकती है, वह जिन्दगी के हर दौरान में तुम्हारा साथ क्यों नहीं दे सकती !....'

'मेरा माथा थक गया रेखा ! अब तुम जाओ....हम दोनों नारी-पुरुष के सम्बन्ध में फिर कभी बातें कर लेंगे...'

'तुम अगर चाहते हो लाल भैया कि मैं तुम्हारे यहाँ न आऊँ तो वह भी सही। रेखा किसी के गले की ढोल होकर नहीं बजना चाहती—'

रेखा उठकर चलने लगी।

लाल ने कहा—'रेखा ! रूठकर न जाओ....तुम जब चाहो, मेरे पास आ सकती हो। मैं अपनी रेखा से अलग नहीं रहा.... अगर तुम रूठकर अलग रहोगी भी तो लाल को पंगु बनाकर ही। मुझे सजग देखना चाहो तो तुम्हें मेरी कसम, रूठकर मत जाओ रेखा !...'

'रेखा रूठकर नहीं जा रही है लाल भैया ! वह यह देखने के लिए अलग हो रही है कि रेखा को तो कदम-कदम पर लाल ही नजर आता है मगर क्या लाल को भी अपने पाँव तले कोई क्षीण रेखा दिखाई पड़ती है कभी !....मुझे देखना है कि लाल-रेखा से अगर रेखा अलग कर दी जाय तो लाल क्या लाल ही रह जाता है....क्षमा करना लाल भैया ! चलती हूँ....'

लाल ने देखा, जाती हुई रेखा की आँखें भर आई थीं और वाणी तो जैसे आँसुओं के सागर में डूब चुकी थी। लाल ने रोका नहीं और रेखा कमरे से बाहर हो गई।

बाहर आकर रेखा ने पुनः उस रात वाले भिखारी को देखा।

वह ठमक गई। भिखारी उसे देखकर गिड़गिड़ाया—'कुछ दे दो बिटिया ! बड़ा पुण्य होगा....'

'तुम बड़े वैसे हो जी...' रेखा ने कहा—'भीख माँगते शर्म नहीं आती। लाल भैया ने एक दिन दे दिया तो अब तुम्हारी आदत पड़ गई....जाओ आज कुछ नहीं मिलेगा...'

'दे दूँ कुछ रेखा ! बेचारा बड़ा बूढ़ा है....' लाल अन्दर से आकर बोला।

'दे न दो, रेखा से क्या पूछते हो ?'

रेखा चली गई बिना एक क्षण रुके।

भिखारी ने एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाया और लाल ने चारों ओर देखकर धीरे से उसे अपने कमरे में कर लिया।

'लाल !...कल तुम बच गये पुलिस के हाथों में पड़कर भी।' भिखारी ने कहा।

'एस० पी० का पड़ोसी होने से यही तो फायदा है सरदार !'

'तभी तो मैं तुम्हें यह मकान छोड़ने नहीं देता....जज के खून से बड़ा तहलका मच रहा है....सुना तुमने ? राजधानी से बहुत से अंग्रेज जासूस आ रहे हैं....'

'जज का खून !....' लाल एकाएक बोला—'सरदार ! एक बड़ी ही आश्चर्यजनक घटना हो गई। सुनकर आप विश्वास न करेंगे....जज का खून मैंने नहीं किया, किसी दूसरे ने किया....'

'लाल !....' भिखारी गम्भीर हो गया—'तो जज मारा कैसे गया....'

'बात बड़ी विचित्र है सरदार !' लाल ने कहा—'मैं रोशनदान से निशाना लगा ही रहा था, तब तक...मेरे सामने वाले रोशन-दान से बाहर निकले हुए एक रिवाल्वर पर मेरी नजर पड़ी, जो जज की खोपड़ी का निशाना कर चुका था। मैं आश्चर्य में पड़ा

ही था कि वह रिवाल्वर गोली फेंक बैठा और जज साहब की खोपड़ी चूर-चूर हो गई....अन्त में मुझे भागना ही पड़ा....'

'तुमने तो बड़ी चिन्ता की बात सुना दी लाल!....' भिखारी बोला—'कौन था वह जिसने जज की हत्या की?....और जज से उसकी दुश्मनी ही क्या थी।'

'पहले तो मैंने समझा कि आपने इस काम पर किसी और को भी तैनात किया है....बाद को सोचने लगा कि सरदार को मुझ पर कभी इतना अविश्वास नहीं हो सकता....'

'मैंने दूसरे आदमी से तो इसका जिक्र भी नहीं किया था लाल!....मैं बहुत हैरान हो गया हूँ....यह कार्य किसी ऐसे व्यक्ति का है, जो जज साहब का बहुत पुराना दुश्मन हो या ऐसा कि जो हमारा प्रतिद्वन्द्वी हो....मैं इस पर विचार करूँगा?....'

'और कोई नयी खबर सरदार?...'

'नई खबर यह है कि तुम्हारे कारण वह बेचारी ग्रामीण लड़की आफत में पड़ गई है....पुलिस सहज ही उसका पीछा नहीं छोड़ेगी....'

'मगर वह तो मेरे बारे में कुछ भी नहीं जानती सरदार? नाम तक तो मेरा जानती ही नहीं, केवल एक दिन धोखे से मेरी सूरत देख ली थी उसने और मुझ पर....'

'मैं समझ गया, मगर तुम्हारा दिल तो मजबूत है न?'

'फौलाद की मजबूती पर शक न कीजिये सरदार! मैं पत्थर का पुतला न होता तो नयना की चीख सुनकर और उसके बाप की मौत देखकर भी स्थिर न रहता...नयना का भी कलेजा बड़ा कड़ा है सरदार! उसका बाप मर गया, उस पर इतना जुल्म हुआ, मगर उसकी उँगली मेरी ओर न उठी....'

'क्या नाम है उस लड़की का?....नयना....नाम तो बड़ा

अच्छा है लाल !' भिखारी तेज आँखों से लाल की ओर देखता हुआ हँसा—'उसका क्या कुछ भी ख्याल तुम्हें नहीं ?'

'मेरी परीक्षा आप बहुत बार ले चुके हैं सरदार !....लाल को केवल इस समय अपने देश की गुलामी का ख्याल है और सभी माया-मोह वह भूल चुका है—मुझपर आपको अविश्वास है क्या ?'

'नही तो ! मगर जिस लड़की ने तुम्हारे साथ इतना किया उसके लिए तुम्हें कुछ तो करना ही चाहिए बेटे !'

'आपकी जो आज्ञा हो, उसको मरते दम तक पूरा कर सकता हूँ...यों नयना जैसी हजार लड़कियाँ भी देश के लिए बलिदान हो जायँ तो मेरी निगाह में कम हैं। आप मुझे क्या करने का हुक्म देते हैं....'

लाल के स्वर में दृढ़ता थी जिससे सरदार प्रसन्न हो उठा।

'लाल उस लड़की को पुलिस के चंगुल से छुड़ाना ही पड़ेगा....वह जमनापुर थाने में बन्द है....' भिखारी बोला—यह कागज देख रहे हो न !....यह जमनापुर के थानेदार के नाम सुपरिटेण्डेण्ट पुलिस का हुक्मनामा है। मिस्टर शर्मा की दस्तखत की हूबहू नकल हुई है या नहीं ?'

'मैं तो हैरान हो गया हूँ सरदार ! मैंने मि० शर्मा की हस्त-लिपि देखी है...कमाल हासिल है आपको कि नकल ने असल को भी मात दे दी है। तो मुझे क्या करना होगा ?'

'तुम एक टैक्सीवाले का वेश पकड़ोगे और टैक्सी लेकर जमनापुर जाओगे...'

'मगर उस लड़की को लाकर रखूंगा कहाँ सरदार ! वह मेरे पास न रहे तभी अच्छा ! बड़ी भावुक लड़की है। मैं तो अटल रहूँगा, मगर वह परेशान हो उठेगी मेरी नीरसता पर....'

'उसे छुड़ाना हमारा धर्म है' भिखारी ने कहा—'उसका अब

कोई सहारा नहीं। तुम उसे रेखा के साथ रख देना....रेखा तो खुश होगी न ?'

'बहुत....आपने अच्छी तरकीब बताई। मि० शर्मा के घर रहने से कोई पूछेगा भी नहीं और मि० शर्मा भी यह नहीं जान सकेंगे कि यही जमनापुर थाने में बन्द थी....' बोला लाल।

'तो लाओ मैं तुम्हारी सूरत बदल दूँ...थानेदार से बातें करते समय अपनी आवाज पर ध्यान रखना। गला भारी करके बोलना !....'

भिखारी ने अपनी झोली खोली। उसमें भिक्षा के बदले तरह-तरह के सामान भरे पड़े थे। भिखारी लाल की सूरत बदलने लगा।

थोड़ी ही देर में टैक्सीवालों की पोशाक पहन कर लाल पूरा टैक्सी ड्राइवर बन गया।

'उस भीड़ के किनारे तुम्हें एक टैक्सी मिलेगी खड़ी हुई....' बोला भिखारी—'तुम्हें देखते ही मण्डल का आदमी उतर जायगा और तुम उसे ड्राइव करने लगना....हाँ वह परवाना ठीक से रख लो....'

भिखारी पहले और कुछ देर बाद लाल घर से बाहर हुआ।

लाल को नियत स्थान पर टैक्सी खड़ी मिली। वह उसके पास चला गया। उसे देखकर ड्राइवर धीरे से उतर गया और लाल ने स्टेयरिङ्ग के पास बैठकर टैक्सी स्टार्ट कर दी।

टैक्सी थोड़ी ही दूर गई थी कि किसी ने पुकारा—'ओ टैक्सी वाले !....'

लाल ने देखा तो रेखा खड़ी थी सड़क के किनारे।

लाल चौंक पड़ा। उसने चाहा कि टैक्सी न रोके मगर रेखा तब तक आगे आ चुकी थी, लाचार लाल ने टैक्सी रोक दी।

रेखा बिना इधर-उधर देखे टैक्सी पर आ बैठी और बोली—'पुलिस कप्तान का बँगला ?....'

लाल ने टैक्सी स्टार्ट कर दी !

'तुम कब से टैक्सी चलाते हो ड्राइवर !' रेखा ने पूछा।

लाल ने चुप रहना ही उचित समझा।

'बहरे हो क्या जी ?'

'आपने कुछ पूछा ?....' लाल सचमुच बहरा बन गया। बोला भी तो आवाज बिगाड़कर।

सुनकर रेखा हँस पड़ी। बोली—'तुम इतने बहरे हो तो दूसरी गाड़ी का भोंपू कैसे सुनते होगे ?'

'भोंपू है हमारी टैक्सी में....देखिये न....' लाल ने अपना भोंपू दबाकर भों-भों बजाया।

तो रेखा लोट-पोट हो गई।

'नौकरी करोगे ?....' पूछा उसने इस बार खूब तेज आवाज में।

'सोचता तो हूँ कि नौकरी कर लूँ मगर बहरे को कौन नौकरी देगा ?'

'हमारे पिताजी तुम्हें नौकर रख लेंगे....'

'पिताजी तो मेरे बचपन में ही मर गये थे, अब अकेला हूँ....'

'अकेलापन तुम्हें अच्छा लगता है ?'

'केला अच्छा लगता है मगर इतने पैसे नहीं पैदा होते कि पेट भर दाना खायँ और ऊपर से फल भी...लड़कपन में मैं बहुत-बहुत केले खाता था....'

रेखा का बँगला आ गया। उतर पड़ी वह और मनीबेग में से पैसे निकालकर देने के बाद तुरन्त घूमकर चली गई।

लाल ने छुटकारे की साँस ली कि रेखा ने उसे पहचाना नहीं।

उसने टैक्सी घुमाई और तेजी के साथ जमनापुर की ओर रवाना हुआ।

लाल को यद्यपि नयना के प्रति सहानुभूति थी परन्तु नयना

का तरह उसका दिल बेकरार नहीं हुआ था। उसने लाल को बचाने के लिए जिस दृढ़ता एवं साहस का परिचय दिया था, वह बहुत कम लड़कियों में पाया जाता है। अगर नयना पढ़ी-लिखी होती और यह जानती होती कि लाल कौन है तथा देश की आजादी के लिए वह किस प्रकार की क्रान्ति का सृजन कर रहा है तो उसका यह त्याग लाल की दृष्टि में महान होता!

फिर भी जो कुछ हुआ वह लाल के लिए सन्तोषप्रद ही था। टैक्सी चलाता हुआ वह मन ही मन रेखा और नयना की तुलना कर रहा था।

रेखा शिक्षित है। लाल के साथ कई साल से रह रही है। लाल ने उसे बहुत नजदीक से पढ़ा है। वह चञ्चल भी है और गम्भीर भी। उसमें सरलता भी है और उग्रता भी। लाल का हर स्वभाव उससे मेल खाता है। जैसे लाल और रेखा दो न होकर एकाकार हों। लाल जानता है कि रेखा से उसका कोई भेद छिपा नहीं है। लाल का साथ देने के लिए वह कितनी व्यग्र है। परन्तु वह एक युवती को काँटों की राह पर क्यों घसीटे? रेखा का उज्ज्वल भविष्य इस पथ को अपनाते ही अन्धकारपूर्ण हो जायगा। कभी-कभी लाल के हृदय में रेखा को अपने साथ कर लेने की उत्कृष्ट अभिलाषा होती है, परन्तु मण्डल का सरदार तो नारी को बाधा के रूप में देखता है। वह कभी रेखा को अपने साथ मिलाने की आज्ञा न देगा। रेखा के पिता भी कट्टर सरकारी नौकर हैं। जिस दिन उन्हें रेखा पर तनिक भी शङ्का हुई वह नमकहलाली प्रदर्शित करने के लिए उसे तुरन्त ही गोली का निशाना बना देंगे।

लाल को रेखा असाधारण लगी है और नयना अत्यन्त साधारण। त्यागमयी दोनों हैं मगर एक का त्याग निःस्वार्थ है

और दूसरी का सस्वार्थ ! नयना लाल के प्रेम के लिए त्याग करती है तो रेखा त्याग करने के लिए ही लाल से प्रेम करती है। दोनों में कितना महान अन्तर है !

और यही अन्तर लाल की समझ के लिए गूढ़ है, जो वह हर नारी को दुर्भेद्य पहेली समझता है। प्रेम की दुनिया में आकर उसके गतिशील पैर पंगु बन जायँगे, रेखा का नारीत्व यदि मिलता है तो उसे एक बहुत बड़ा सहारा मिल जायगा।

हर तरह से लाल का हृदय रेखा को ही उच्च पाता है और नयना की आकृति क्षीण होती-होती स्मृति-पट से विलीन हो जा रही है।

लाल के हृदय में आया कि टैक्सी लौटा ले चले। नारी के स्वार्थ को प्रोत्साहन देकर क्या करेगा। फिर उसे सरदार की आज्ञा याद आई। चाहे जो हो सरदार का हुक्म बजाना ही पड़ेगा। मण्डल के नियम का उल्लंघन करना बेमौत मरना है।

तभी लाल चौंक पड़ा।

जमनापुर थाने की पीली कोठी सामने ही थी। फाटक पर बन्दूकधारी पुलिस का पहरा था।

लाल ने टैक्सी रोक दी। उतर कर पुलिस के पास गया।

पूछा—'थानेदार साहब हैं....'

'हैं !....तुम कहाँ से आ रहे हो....'

'मुझे कप्तान साहब ने भेजा है...'

सुनकर पुलिस में बेहद स्फूर्ति आ गई। झट से बोला—'तुम आओ मेरे साथ...'

दोनों थाने के अन्दर आये।

'ओ भाई दानसिंह !....' सिपाही ने पुकारा—'इन्हें कप्तान साहब ने भेजा है...'

दानसिंह पास आया। उसने घूमकर लाल को देखा, फिर बोला—'मेरे साथ आओ....'

लाल थानेदार के सामने लाया गया।

'क्या है दानसिंह ?' थानेदार ने पूछा।

'इस आदमी को मि० शर्मा ने भेजा है'—दानसिंह बोला।

'ओह !...क्या खबर लाये हो भाई !'

लाल ने बिना आवश्यकता के बोलना उचित नहीं समझा। उसने जेब से निकालकर एक कागज थानेदार के हाथ में दे दिया। थानेदार ने कागज लेकर देखा। पढ़ने लगा—

'मैं एक जासूस और कुछ पुलिसमैन सादी वर्दी में भेज रहा हूँ। उस लड़की को तुरन्त इनके साथ कर देना...'

पढ़कर थानेदार ने उड़ती दृष्टि से लाल को देखा।

फिर बोला—'ओह ! तो आप जासूस हैं !....'

'जी हाँ !' लाल ने कहा।

'खूब भाई, खूब ! आप लोग भी वेश बदलने में कमाल कर देते हैं !' थानेदार हँसकर बोला—'फाटक के सिपाही ने कोई बेअदबी तो नहीं की।'

'जी नहीं, धन्यवाद !'

'आपके साथ के और लोग कहाँ है...' पूछा थानेदार ने।

लाल इसका उत्तर देने के लिए पहले से ही तैयार था, बोला—'मि० शर्मा ने कहा था कि बागी लोग भी उस लड़की को छुड़ाने की फिक्र में होंगे और हो सकता है कि उनके कुछ जासूस भी थाने के आस-पास चक्कर लगा रहे हों, अतः तुम अकेले ही जाना, अन्य लोगों को कुछ दूर पर ही उतार देना...'

'ठीक है....तो आपने उन्हें उधर ही उतार दिया है ?'

'जी हाँ ! हम-आप तो हुक्मी बन्दे हैं !...'

'क्या करें साहब'—थानेदार ने कहा—'पेट न होता तो

इतनी जलील नौकरी क्यों करते! दिन और रात में कभी आराम की शकल भी नहीं देख पाता....हाँ तो, आप के साथ यहाँ से कुछ पुलिस भी कर दूँ?'

'बेकार है....' लाल ने कहा—'मेरी टैक्सी चारों ओर से सुरक्षित है...थोड़ी दूर आगे तो साथी मिल ही जायँगे....व्यर्थ के दिखावे से बागी कान खड़े कर लेंगे...'

'दानसिंह! उस छोकरी को लाओ...' थानेदार ने आज्ञा दी।

नयना लाई गई। लाल ने देखा सुन्दर चेहरा पीलापन लेकर और भी सुन्दर हो गया था। लगता था जैसे वह इधर एक पल के लिए भी न सोई हो, हमेशा किसी चिन्ता में लीन रही हो!

लाल को उस लड़की की विवशता पर बड़ी दया आई।

नयना ने भी लाल को देखा मगर पहचान न सकी।

'आप अपनी टैक्सी अन्दर ला दें तो बड़ा अच्छा हो....' थानेदार ने कहा।

लाल बाहर आया। टैक्सी स्टार्ट कर थाने के अन्दर ले गया। दानसिंह ने नयना को ठेलकर टैक्सी की पिछली सीट पर बैठा फाटक बन्द कर दिया।

'अच्छा, चलूँ साहब!...'

'बेहतर है....' थानेदार ने कहा—'कप्तान साहब से हमारा सैल्यूट बोलियेगा और कहियेगा कि हम लोग सभी तरह से खिदमत के लिए बिलकुल तैयार बैठे हैं...'

लाल ने थानेदार से हाथ मिलाया और टैक्सी स्टार्ट कर दी।

थानेदार अभी आकर मेज पर बैठा ही था कि फोन की घण्टी बज उठी। उसने रिसीवर उठाया—'हलो—मैं थानेदार जमनापुर बोल रहा हूँ....ओह मि० शर्मा हैं!...गुडमार्निङ्ग सर!.... क्या कहते हैं सर? उस लड़की को जेल भेज दूँ? मगर उसे तो आपका जासूस अभी-अभी आकर ले गया है। क्या!....वह

आपका आदमी नहीं था ! आपने उसे नहीं भेजा था !....माई गॉड !....वह तो निकल गया....जी हाँ, टैक्सी का नम्बर मुझे याद है ३२७५, रङ्ग हलका हरा...जी, शेवरलेट गाड़ी है, बेशक बुरा हुआ। मैं अभी सभी थानों पर फोन करता हूँ। आप शहर के चौराहों पर तुरन्त पुलिस तैनात कर दें.. जी मुझे माफ करें.... बड़ा शर्मिन्दा हूँ—मेरे पास मोटर साइकिल भी नहीं कि पीछा करूँ...'

उधर लाल तेजी से टैक्सी भगाये जा रहा था। ३-४ मील आ चुकने पर उसने एक टैक्सी खड़ी देखी ! ड्राइबर बाहर निकल कर खड़ा था। उसने हाथ ऊपर उठकर इशारा किया।

लाल ने टैक्सी रोक दी और उतरकर उसके पास आया !

'क्या है ?' पूछा उसने।

'आप अपनी टैक्सी छोड़ दीजिए और मेरी टैक्सी पर जाइये !'

'और यह लड़की ?'

'इसे भी ले जाइये...'

'ऐसा क्यों ?' लाल ने पूछा।

'सरदार की आज्ञा !...आप जरा जल्दी करें...'

लाल ने अपनी टैक्सी पर से नयना को उतार कर दूसरी टैक्सी पर बिठाया। टैक्सी चल पड़ी। लाल हैरान था कि सरदार ने ऐसा प्रबन्ध क्यों किया।

लाल अभी नयना को अपना परिचय नहीं बताना चाहता था, इसलिए चुपचाप तेजी के साथ टैक्सी भगाये जा रहा था।

'तुम मुझे कहाँ ले जा रहे हो !' नयना का स्वर भयभीत था।

'जेल !' लाल ने छोटा-सा उत्तर दिया।

नयना को निश्चय हो गया कि अब उसकी जिन्दगी जेल में ही कटेगी। जवानी के सपने जेल की दीवारों में ही बूढ़े हो जायँगे।

उसने चारो ओर देखा। टैक्सी की छत ऊपर से खुली थी। मगर सड़क के किनारे के पेड़ इतने नीचे नहीं थे कि वह बन्दर बनकर ऊपर चढ़ जाय।

आधे घण्टे तक टैक्सी भागती रही। तभी लाल की दृष्टि एक आदमी पर पड़ी, जो उसे दूर से ही इशारे कर रहा था।

आदमी पास आकर बोला—'ये कपड़े लेकर आप अपनी असली सूरत पकड़ लें और यहाँ से पैदल ही घर चले जायँ—लड़की को मेरे हवाले करें....मगर लड़की....लड़की....लड़की कहाँ है?'

आश्चर्य से लाल ने घूमकर देखा तो टैक्सी खाली थी, नयना पता नहीं कब और कहाँ उतर गई थी।

'बड़े आश्चर्य की बात है।' लाल ने कहा।

'अब देर करने का मौका नहीं...' वह आदमी बोला—'जाने दीजिये, उस लड़की की फिर खोज की जायगी—इस समय आप अपने को बचायें....पुलिस वाले चारों ओर खड़े हैं....यह टैक्सी मैं ले जाता हूँ....३२५७ को कौन ले गया?....'

'नम्बर ३५ ले गया'—लाल ने कहा।

'वह किसी आफत में न पड़े, इसका प्रबन्ध करना है...पता नहीं उससे गाड़ी का नम्बर बदला या नहीं? अच्छा तो आप जायँ...'

लाल एक छोटी-सी गठरी उस आदमी के हाथ से लेकर पास हो के एक पुल के नीचे चला गया। थोड़ी ही देर में वह वहाँ से निकला तो अपने असली वेश में था।

मस्त चाल से सीटी बजाता हुआ वह आगे बढ़ा। शहर वहाँ से केवल दो मील पर था। शहर में घुसने पर उसने देखा कि हर चौराहे पर पुलिस के जत्थे खड़े हैं और टैक्सियों तथा कारों को रोककर पूछताछ कर रहे हैं।

लाल निर्भय अपने डेरे पर पहुँच गया। अभी वह ताला खोल ही रहा था कि पीछे से आवाज आई—'बच्चा !'

लाल ने घूमकर देखा, बूढ़े भिखारी की उंगली मस्तक पर थी। लोग आ जा रहे थे। भिखारी बोला—'कुछ दे दो बच्चा !....ईश्वर भला करें....'

लाल पैसा निकालने के लिए जेब टटोलने लगा।

'बच आये बेटा लाल ?'—भिखारी धीरे से बोला—'यहाँ तो पूरी सरगर्मी हैं....वह लड़की नम्बर ४७ के साथ चली गई न !'

'जी नहीं। वह तो रास्ते में ही न जाने कहाँ उतर गई थी—' लाल ने कहा।

'तुम्हें उसने पहचान लिया था ?'

'नहीं।'

'मैं चलता हूँ, कल शाम को आऊंगा....' बोला भिखारी, फिर उसने जरा तेज आवाज से कहा—'मिल जाय बेटा ! दूसरा दरवाजा देखूँ....'

लाल ने कुछ पैसे निकाल कर भिखारी के हाथ पर रख दिया और वह आशीर्वाद देता हुआ चला गया—'भगवान भला करें दाता का ! जियो मालिक ! खुश रहो !...'

लाल दरवाजा खोलकर अन्दर आ बैठा।

• •

जाड़े में दोपहर की धूप भी बड़ी भली लगती है। जी चाहता कि धूप में खायें और पहनें। बरामदे में कुर्सी पर बैठी हुई रेखा धूप खा रही है। बूढ़ी दाई पास ही बैठकर रेखा के लिए एक नये डिजाइन का स्वेटर बुन रही है।

और चहकती हुई बुलबुल की वह निःस्वरता बूढ़ी दाई को आज खल रही है। इतनी उम्र के अनुभव ने उसे बता दिया है कि रेखा अवश्य ही कल लाल से झगड़ा कर आई थी। तभी तो उसने रात में खाना नहीं खाया और न आज सुबह चाय ही पी।

'रेखा !....बोलेगी नहीं आज ?'

'क्यों बोलूँ...तुम्हारा लाउडस्पीकर तो बज ही रहा है—' रेखा ने रूखे स्वर में कहा।

'पता नहीं इसे कल से क्या हो गया है ? कुछ बताती भी नहीं कि कोई उपाय करूँ....पाल-पोसकर इतनी बड़ी कर दिया इसे, अब आँसू दिखाकर जान लेना चाहती है....'

रेखा ने चटपट अपनी आँखें पोंछ ली और कुर्सी पर से उठ खड़ी हुई।

'कहाँ जाती है ?'—दाई ने पूछा।

'जहाँ तुम्हारे लाउडस्पीकर की आवाज न पहुँच सके....'

'सुन तो !' दाई ने उठकर रेखा का हाथ पकड़ लिया और उसे पुनः कुर्सी पर बिठाकर उसका सर सहलाने लगी—'रेखा क्या हो गया है तुझको ?...'

'कुछ नहीं दाई ! मेरे सर में दर्द है...'

'हे भगवान! बचपन में तो इसे कभी कोई बीमारी नहीं हुई, अब जवानी भी आई तो सरदर्द बनकर...ऐसा तो होता ही है, लड़की! कभी-कभी आपस में कहा-सुनी तो हो ही जाती है। उस लाल-पीले ने तुझे कुछ कह दिया है क्या?....'

'हाँ!'—रेखा जोर से बोली।

'तभी तो आँखों में बेमौसम के बादल घिर आये हैं और चेहरे पर आँधियाँ चल रही हैं....सुन रेखा! रूठने के बाद का मिलाप बड़ा अच्छा लगता है! अभी तू बच्ची ही तो है, क्या समझेगी? जरा-सी बात हुई तो लगी सिसकने! चल अभी लाल से कहकर मेल करा देती हूँ....'

'मैं उनके पास नहीं जाऊँगी दाई!' रेखा ने कहा—'उन्हें मैं अच्छी नहीं लगती....'

'उस छोकरे की आँखें पत्थर की हैं क्या, जो तेरी सूरत नहीं देख सकता! तू भला किसे अच्छी नहीं लगेगी री....'

'वे कहते हैं मेरे यहाँ मत आया कर!'

'तो मत जा तू उसके पास'—दाई बोली—'दो चार दिन नहीं गई तो वह छोकरा खुद दौड़ा आयेगा....बड़ा लाट साहब का नाती बन गया है। तूने ही तो उसे सर चढ़ा लिया है...मेरी चले तो मैं उस दईमारे को एक दिन में ठीक कर दूँ....'

'क्या बात है दाई?....' पीछे लाल खड़ा था।

'अरे लाल बेटा! आओ-आओ! देखो....रेखा बिटिया को जुकाम हो गया है....'

'तभी नाक न बहकर आँखें बह रही हैं दाई!'

रेखा को लगा जैसे लाल व्यंग कर रहा है!

'बड़ा अच्छा स्वेटर बुन रही हो दाई!' लाल ने कहा—'एक मेरे लिए भी बुन दोगी!'

'रेखा तो मुझसे भी अच्छी बुनती है बेटा!....तुम्हारे लिए

भी बुन देगी....'

'रेखा पंगु है दाई ! तभी तो अपना स्वेटर तुमसे बुनवा रही है....जुकाम में तो ऐसा होता ही है....'

अब रेखा को असह्य हो उठा। वह तेजी से उठी और अपने कमरे में चली गई। लाल आया था मेल करने; परन्तु सब कुछ बेमेल हो गया।

'रेखा को क्या हो गया है दाई।'

'यह तो तुम ही जानो बेटा !'—दाई ने कहा—'क्यों उसे खिझा देते हो तुम...'

'मैं क्यों खिझाऊँ ! कल वह खुद ही रूठकर चली आई थी.. इस समय मैं मनाने आया था तो और भी नाराज हो चली...'

'तुम तो लाठी मार नाराजी भगाते हो....ऐसा भी कहीं चलता है...मनाने के लिए पाँव पड़ना पड़ता है—समझे !' बूढ़ी दाई अर्थपूर्ण ढग से मुस्कराई।

'लाल को पाँव पड़ना नहीं आता दाई....मेरे पैर सलामत रहें तो जूतियाँ अपने आप आ जायँगी....'

'क्या कहता है लड़के ?...रेखा तेरी जूती है ?...तू भी कम शैतान नहीं है, नहीं तो मेरी रेखा शीशे पर पैर रखकर फिसलने वाली नहीं....'

'मैं जाता हूँ दाई ?...रेखा को कभी मेरी जरूरत पड़े तो बुला लेना....'

'जाओ तुम ! रेखा तुम्हें क्यों बुलाने जायगी ?....प्यासे की प्यास अगर सच्ची है तो कुएँ को खुद उसके मुँह तक उठ आना पड़ेगा...' कहकर दाई चली गई खाना पकाने।

उस दिन रेखा ने कुछ न खाया। अपने कमरे में चिन्ता-मग्न पड़ी रही। लाल को मनाने का उसका जी चाहता था परन्तु

नारी-जनित मान उसे रोके हुए था। वह चाहती थी कि लाल स्वयं आकर उसे मनाये।

शाम को मि० शर्मा दिन भर की परेशानी के बाद लौटे। वे आज दोपहर को खाना खाने भी नहीं आ सके थे। दाई से यह सुनकर कि रेखा की तबीयत खराब है, वे उसके कमरे में आये। रेखा लिहाफ में बदन छिपाये पड़ी थी। रात के आठ बज रहे थे।

'रेखा, कैसी तबीयत है ?....'

'बिलकुल ठीक !'

'दाई तो कहती थी कि तेरी तबीयत बहुत खराब है'—मि० शर्मा ने कहा।

'दाई का दिमाग ठिकाने नहीं रहता पिताजी !'—बोली रेखा—'देखिये न, एक तो मेरी तबीयत खराब, दूसरे सवाल पर सवाल....किसका-किसका जवाब दूँ मैं ?....'

'अभी तो कहती थी कि तेरी तबीयत बिलकुल अच्छी है'—

रेखा भी खीझ उठी। बोली—'आप भी ठीक दाई की तरह हैं पिताजी !...आप दिन भर से अब तक कहाँ थे ?'

'झक मारने से फुरसत मिले तब तो घर आऊँ ?' मि० शर्मा ने कहा—'इन बलवाइयों के मारे तो जान अजीब मुसीबत में है...आज वे जमनापुर थाने से एक कैद लड़की को भगा ले गये....'

'कैद लड़की ?'—रेखा उठकर बैठ गई।

'हाँ ! कार पर वे उड़ा ले गये....वह लड़की भी उन्हीं के दल की मालूम होती है....'

'पिताजी ! क्या उनके गिरोह में लड़कियाँ भी हैं ?'

'होंगी ही, कौन जाने ?....'

'लड़कियाँ भी क्या इतनी निडर हो सकती हैं ?'

'तेरी तरह सभी डरपोक नहीं होतीं रेखा !...उस लड़की को ही देख न, उसकी आँखों के सामने उसका घर जल गया, उसके बाप की जान तक ले ली गई मगर उसने जबान तक न हिलाई....'

रेखा की आँखें आश्चर्य से फैल गईं। बोली—'तब तो मैं उस लड़की को अवश्य देखूँगी पिताजी, मेरी ही तरह तो होगी !....'

'नहीं तो क्या उसके दो सर और चार हाथ हैं ?....पगली कहीं की....अब वह लड़की हमारे पंजे में नहीं है जो तू देखेगी ! उसे तो बलवाई भगा ले गये....'

'अच्छा हुआ, बेचारी की जान बच गई, नहीं तो क्या आप लोग उसे यों ही छोड़ सकते थे ?....'

'उसको तो क्या, अगर तू भी वैसा काम करे तो तेरी भी जान नहीं छूट सकती रेखा !....' मि० शर्मा के स्वर में दृढ़ता थी, जिसे रेखा ने लक्ष्य किया।

'अब आप जाकर खाना खा लीजिए पिताजी ! दिन भर के भूखे हैं....' रेखा ने बात बदल दी।

मि० शर्मा चले गये। रेखा ने पुनः लिहाफ में मुँह ढँक लिया। चाहती थी कि लाल का ख्याल उसे न आये मगर आकर ही रहा तो आँखों में आँसू भर आये।

लाल उसे समझता क्यों नहीं ! वह उससे दूर-दूर रहने की चेष्टा क्यों करता है ! रेखा ऐसी नारी नहीं जो पुरुष के पाँव की बेड़ी बनकर रहे। वह तो ऐसी तारिका है, जो चाँद के पास रह कर और भी चमकेगी।

रेखा को उस रात नींद नहीं आई !

प्रातःकाल के समय थोड़ी देर के लिए आँखें झपकीं तो भयानक स्वप्न नाच उठा। रिवाल्वर की गरज, गोलियों की सनसनाहट, चीख-पुकार और इन सबसे ऊपर बेड़ियों से जकड़ी मातृभूमि का करुण मुख ! देखती रही रेखा, सुनती रही चीख-पुकार और गोलियों की गरज ! विचलित नहीं हुई वह। भागी भी नहीं।

उसने रिवाल्वर निकाला, साधकर गोली छोड़ दी और माँ की बेड़ियाँ एक ही बार में, टूटकर बिखर गईं। दौड़कर वह उन कोमल पैरों से जा लगी—'माता, तुम्हें बचपन में ही खो दिया था, आज तुम्हें पा सकी हूँ।' और माता के मुख की करुणा धीरे से हँस पड़ी। रेखा निहाल हो गई। वह माता के पास पहुँचना चाहती थी, आज पहुँच भी गई।

स्वप्न का प्रारम्भ भयानक और अन्त सुखद था। नींद खुली तो रेखा ने देखा उसके गाल तर थे आँखों के पानी से। उसके नेत्रों के समक्ष अब भी माता की वह मूर्ति नाच रही थी।

वह उठ बैठी। कुछ देर तक स्वप्न पर विचार करती रही। मातृभूमि का वह दर्शन कितना मुग्धकर था। पर वह माँ की सेवा करे तो कैसे ! रास्ता उसका अनजाना है, अनदेखा है।

और रास्ता जाननेवाला लाल उससे रूठ बैठा है, उसे अपनाना नहीं चाहता। नारी के हृदय का विद्रोह किसका सहारा लेकर पनपे, किसकी ज्वाला पकड़कर प्रज्वलित हो ?

लाल की याद आने से रेखा का मुख गम्भीर हो उठा।

रेखा ने दृढ़ संकल्प कर लिया। वह अपने लाल भैया के पास जायगी। उनके पैरों पर सर रखकर गिड़गिड़ायेगी। कहेगी—'लाल भैया ! मुझे माफ करो। अपनी रेखा को क्षमा करो....'

एक घण्टे बाद ही रेखा धीरे-धीरे चलकर लाल के दरवाजे पर आ खड़ी हुई। लाल मेज पर बैठा था। उसकी पीठ दरवाजे

की ओर थी। उसके सामने मेज पर रेखा की फोटो रखी थी, जिसे वह निर्निमेष दृष्टि से देख रहा था।

कह रहा था—'मेरी रेखा! तू क्यों रूठ गई है मुझसे?.... क्या चाहती है तू? मैंने पहले ही कह दिया था कि रेखा से परे लाल का कोई अस्तित्व नहीं....वह रेखा से दूर रहकर पंगु है, अपाहिज है, पागल है...फिर भी तू रूठ ही गई रेखा! कसूर भी नहीं बताया कि उसका प्रतिकार कर सकता....कुछ कहा भी नहीं कि कुछ समझ सकता...तेरे दिल की बात मुझसे छिपी नहीं है रेखा! तू आगे बढ़ना चाहती है...तू आकाश चूमना चाहती है....मगर एक कमजोर इन्सान तुझे क्या मदद दे सकता है?.... केवल एक गङ्गा को ही भगीरथ ने रास्ता दिखाया था, मगर दूसरी नदियाँ तो स्वयं अपना मार्ग बनाकर बह चली हैं.. तुझमें ताकत होगी तो खुद उठेगी रेखा! लाल तेरा पाँव खींचकर भी तेरी महानता को नीचे नहीं ला सकेगा....'

सुन रही थी रेखा। उत्तरोत्तर गम्भीर होती जा रही थी। लाल बेखबर था। रेखा ने खबर दी, पुकार कर—'लाल भैया!'

लाल चौंककर घूमा। पीली पड़ी रेखा पर उसकी दृष्टि जम गई। रेखा आगे बढ़ आई। मेज पर से अपनी फोटो उठाकर देखने लगी, फिर ज्यों का त्यों रख दिया उसने।

'रेखा! क्यों आई हो?....' पूछा लाल ने।

'क्या आने का भी मेरा अधिकार छीन लिया गया लाल भैया?' बोली रेखा—'अनधिकार चेष्टा करके आई हूँ तो थोड़ी देर बैठकर ही जाऊँगी....'

'बैठो न!....कैसी हो रही हो?'

'जैसी तुम देखना चाहते थे'—रेखा बैठती हुई करुण-कण्ठ

से बोली—'तुमसे अलग होकर रह सकती तो यहाँ न आती... आ गई हूँ तो बुरा न मानो लाल भैया !....'

'रेखा, तुझे अपने से अलग कर ही कौन रहा है...'

'तुम लाल भैया और कौन !....' रेखा क्षीण हँसी हँस पड़ी— 'तभी तो सजीव-रेखा से अधिक, रेखा की निर्जीव फोटो तुमको प्यारी है.. है न !....'

'तू रूठ चली थी तो तेरी फोटो से ही बातें कर रहा था !'

'तुम सब कुछ कर सकते हो लाल भैया ! मगर रेखा जैसी जबान इस फोटो को नहीं, जो यह तुम्हारी बातों का जवाब दे सके...कभी जवाब पाने की लालसा उठेगी तो उसे सजीव रेखा ही पूर्ण कर सकेगी....इस फोटो में तुम निर्जीव रेखा की हंसी देख रहे हो मगर सजीव रेखा के आँसू तुम इसमें न देख पाओगे....'

'रेखा ! तू फिर वैसी ही बातें करने लगी !'

'मैं एक बात पूछने आई थी लाल भैया ! तुमने कभी किसी बहरे टैक्सी वाले को देखा है ?'

लाल चौंक पड़ा—'मैंने तो ऐसा ड्राइवर नहीं देखा !'

बड़ा अच्छा आदमी था बेचारा....३२५७ नम्बर की टैक्सी चलाता था....'

अब लाल और चौंका ! बोला—'तुम्हें उसका नम्बर तक याद है ?...'

'क्यों न याद रहे ?'—रेखा गम्भीर स्वर में बोली—'उसी टैक्सी पर तो मैं घर आई थी और उस बहरे से कुछ मजेदार बातें भी की थी....'

'बहरों से बातें करने में बड़ा आनन्द आता है रेखा !'

'हाँ लाल भैया !...मगर मेरी राय में बहरे लोग दगाबाज भी कम नहीं होते !

'वह कैसे ?...'

'पिताजी कह रहे थे कि ३२५७ नम्बर की टैक्सी पर ही जमनापुर थाने से एक कैद लड़की भगाई गई थी....और आश्चर्य तो यह है कि इस नम्बर का लाइसेंस भी चार साल पहले ही काटा जा चुका है....'

लाल के मुख से शब्द न निकले। वह चुपचाप विस्फारित नेत्रों से रेखा का मुख देख रहा था कि इस लड़की का जटिल स्वभाव उसे पग-पग पर परास्त करके रहता है।

'लाल भैया! चुप क्यों हो रहे हो?'—रेखा अब भी गम्भीर ही थी।

'सोच रहा हूँ मैं उस दगाबाज बहरे की बात!....' लाल ने कहा।

'सोचकर क्या करोगे?....अब तो वह बहरा और वह लड़की दोनों न जाने कहाँ होंगे?....'

'लड़की कौन?'

'वही, जो जमनापुर थाने में कैद थी और जिसे वह बहरा भगा ले गया.. वह लड़की उसकी कौन रही होगी लाल भैया!'

'मैं क्या जानूँ?....' लाल तेज नजरों से रेखा की ओर देखता हुआ बोला।

'वह उसकी प्रेमिका ही रही होगी....' रेखा स्थिर-भाव से कह रही थी—'तभी तो उसने जान हथेली पर रखकर उसे बचाया लाल भैया! बहरों की श्रवण-शक्ति शून्य हो जाती है तो क्या उनके हृदय का स्पन्दन भी गतिहीन हो चलता है, मैं तो इसे नहीं मानती। बहरा तो क्या, अन्धे इन्सान को भी दिल होता है....क्यों लाल भैया!....'

'चुप रहो रेखा!' लाल का स्वर तेज हो गया था—'व्यर्थ की बातें मुझसे न किया करो...'

'बिगड़ो मत लाल भैया! मैं सिर्फ यही पूछने आई थी...अब जा रही हूँ...मगर बहरों की चर्चा इतनी बुरी क्यों लगती है तुम्हें!...उन्हें भी समझो तो तुम्हारा अनुभव कुछ घट नहीं जायगा...चढ़ना चाहो तो उस बहरे ड्राइवर को बुला दूँ। उसने तो मेरे यहाँ नौकरी करने का वादा किया था...या चाहो तो खुद बहरे बनकर कभी टैक्सी चला देखो, ३२५७ न सही तो ५८ ही सही ..'

'भाग यहाँ से दुष्ट कहीं की!....' चिल्ला उठा लाल।

'लाल भैया! रेखा को भी दो आँखें हैं, जिसमें चौबीसों घण्टे लाल की सूरत तैरती रहती है...मुझे भी दो कान हैं, जो लाल भैया की आवाज को रेकर्ड किये बैठे हैं। रेखा के सामने से लाल भैया छिपकर भाग नहीं सकते...कभी नहीं भाग सकते....मैं जाती हूँ। अपनी यह फोटो लिए ही जाऊँ, इसे रखकर क्या करोगे तुम! इसे कभी एकान्त में देखने लगोगे तो नाहक ही मेरा दिल तुम्हारे पास खिंच आने को मचलेगा....'

रेखा ने अपना फोटो उठाकर हाथ में ले लिया।

'तुम्हारी आँखों में जब रेखा का कोई मूल्य नहीं तो कागज के इस टुकड़े का मूल्य लगाकर क्या करोगे लाल भैया! बेमोल बिकने वाली चीज को तुम ठुकराओ और तुच्छ कागज को अनमोल समझो, यह मैं नहीं देख सकती....कभी तुम्हें इस फोटो को देखने की लालसा जगे तो इस रेखा को ही बुलाकर देख लेना....रेखा स्वर्ग में भी होगी तो तुम्हारा आह्वान पाकर आँख में आँसू बन उतर आयेगी लाल भैया!...इतना समय तुम्हारा बर्बाद किया इसे यदि मेरा अधिकार न समझो तो क्षमा कर देना!....'

और रेखा तेजी से निकल गई। लाल पुकारता ही रहा—'रेखा!...ओ रेखा!...वह फोटो देती जा....उसे मत ले जा....'

मगर रेखा ने अपने कान बन्द कर लिए थे। वह दौड़ती हुई आकर अपने पलङ्ग पर गिर पड़ी और लगी फूट-फूट कर रोने, रो-रो कर तड़पने। वह गई थी लाल को मनाने परन्तु वहाँ जाकर क्या-क्या बक गई, कैसे बक गई, क्यों बक गई ! सोचकर अपना सर धुनने लगी।

रेखा अत्यन्त व्यग्र हो उठी है और आँसू बहाकर मन की सारी ग्लानि धो रही है। उधर लाल अपने कमरे में कुर्सी पर बैठा है। आँखों में आँसू तो नहीं मगर अन्तराल अग्निमय हो रहा है। रेखा अपनी फोटो क्यों लेती गई, लाल का आखिरी सम्बल भी चला गया। रेखा ऐसी आग जला कर गई कि लाल के हृदय की सारी कठोरता भभककर ज्वाला बन गई है।

वह अपनी फोटो छीन ले गई मगर लाल के हृदय में उसका जो भव्य चित्र अङ्कित है उसे वह कभी नहीं ले जा सकती। रेखा दूर भाग सकती है मगर उसकी याद लाल के कलेजे में हमेशा शोला बनकर दहकती रहेगी।

सोचते-सोचते शाम हो चली। लाल ने बल्व भी नहीं जलाया। तभी बाहर से किसी ने पुकारा—'मि० लालचन्द !'

स्वर सर्वथा अपरचित था....कुछ कर्कश भी !

लाल ने कहा—'कौन साहब हैं ?....अन्दर आइये....'

उठकर लाल ने बल्व जलाया। तभी उसने एक सूटेड-बूटेड साहब को अन्दर आते देखा।

'आप ही मि० लालचन्द हैं ?' साहब ने अपने हाथ की छोटी-सी अटैची मेज पर रखते हुए पूछा।

'हाँ ? बैठिये....' कहकर लाल ने आगन्तुक की ओर देखा। लम्बा कद, चालीस के पार की अवस्था, बदन पर अंग्रेजी पोशाक, रोबीला चेहरा, फ्रेंचकट दाढ़ी-मूछें, आँखों पर काले रङ्ग की ऐनक, हाथ में मोटा-कीमती सिगार।

लाल ने इस व्यक्ति को कभी नहीं देखा था!

पूछा उसने—'कोई आज्ञा ?....'

आगन्तुक हँसा। बोला—'थोड़ी-सी तकलीफ देने आया हूँ मि० लालचन्द! मुझे माफ करेंगे... मेरा ख्याल है कि बात शुरू करने से पहले आप मेरा परिचय जानना पसन्द करेंगे...है न?'

'जी हाँ! बड़ी कृपा होगी....' लाल बोला। वह एकटक आगन्तुक के चश्मे की ओर देखकर यह अन्दाज लगा रहा था इसके भीतर कैसी आँखें होंगी—लाल, पीली या नीली?

'माफ कीजिए मि० लालचन्द! मेरी दायीं आँख पत्थर की है....और इन्सान को अपनी बदसूरती छिपाने के लिए कुछ तो करना ही पड़ता है...हाँ, तो मैं अपना परिचय दे दूँ....आपको शायद इधर होनेवाले खून तथा हत्या आदि की खबर तो होगी ही?'

'जी हाँ....है?....'

'सरकार इन घटनाओं से बेहद परेशान है....' आगन्तुक ने कहा—'चाहे जैसे हो, वह बलवाइयों को दण्ड देना चाहती है... मैं सरकार द्वारा राजधानी से भेजा गया एक जासूस हूँ—सरकार का मुझ पर विश्वास है....कितने ही पेचीदे मामलों में सरकार मेरी मदद से विजयी हुई है....मेरा नाम बिलफोर्ड है—जाति का क्रिश्चियन हूँ मैं....'

'मैं समझ गया....' बोला लाल और उसने जेब में पड़ा हुआ अपना रिवाल्वर टटोला—'आप क्या अकेले ही आये हैं मि० बिलफोर्ड?....'

'जी नहीं, मेरे साथ के जासूस एकदम तैयार आपके मकान को चारों तरफ से घेरे हुए हैं....' बिलफोर्ड बोला—'हमारा काम बहुत जिम्मेदारी का है मि० लालचन्द! इसे तो आप मानते ही होंगे....'

'जी हाँ, क्यों नहीं !....तो मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ....'

'शुक्रिया ! आपके विरुद्ध मेरे पास कुछ प्रमाण हैं....मि० लालचन्द ! अगर मैं आपसे कुछ सवाल पूछूँ तो मुझे उम्मीद है आप बुरा न मानेंगे....'

'जी हर्गिज नहीं, आप शौक से पूछें !' लाल ने कहा।

'क्या आप इधर कभी लखनपुर की तरफ गये थे !...'

'जी, यह गाँव तो मेरे गाँव के रास्ते में ही पड़ता है...दो-तीन दिन पहिले ही मैं गाँव पर से आ रहा था तो लखनपुर के आगे मेरी सायकिल पञ्चर हो गई थी और मुझे पुलिस ने सन्दिग्ध समझ कर रोक लिया था...'

'आप के गाँव का क्या नाम है !...'

'मोहनियाँ !...' बोला लाल।

'मि० लालचन्द !....' बिलफोर्ड बोला गम्भीर स्वर में—'मुझे यहाँ आये दस दिन हो चुके हैं मगर मैंने अपना चार्ज आज ही लिया है। इस बीच गुप्त ढङ्ग से मैं पता लगा रहा था...मोहनियाँ गाँव से शहर आने के लिए सुदामापुर का रास्ता नजदीक पड़ता है....है न !...फिर लखनपुर से होते हुए व्यर्थ में सात मील का चक्कर लगाना आपने क्यों पसन्द किया !...'

'मैं अक्सर उसी रास्ते से आता हूँ मि० बिलफोर्ड !...'

'शायद नयना से पुरानी जान-पहचान के कारण ही....'

'कौन नयना !'

'वही लड़की, जिसके घर जज की हत्या वाली रात को आप ठहरे थे....' बिलफोर्ड हँसा—'उस दिन भी तो आपकी मोटर सायकिल पञ्चर हो गई थी, भले ही पुलिस की गोली से हो या...'

'मि० बिलफोर्ड आपका इरादा क्या है !....'

'मुझे माफ करें....सरकारी आदमी अपने कर्तव्य से मजबूर होता है....' बिलफोर्ड बोला। वह एकटक लाल के दाहिने पैर को

ओर देख रहा था, जिस पर पायजामा उठा रहने के कारण एक छोटा-सा घाव दिखलाई पड़ रहा था।

बिलफोर्ड को पैर की तरफ देखता हुआ पाकर लाल ने पायजामा झट से नीचे गिरा दिया। बिलफोर्ड फिर हँसा।

'मि० लालचन्द, आपके पैर में यह घाव कब लगा?'

'बहुत दिन हुए....'

'मुझे मालूम हुआ है कि जज के हत्यारे को पुलिस की एक गोली भी लगी थी, क्योंकि सड़क पर खून के धब्बे दिखाई पड़े थे....आपका यह घाव भी तो अभी ठीक से सूख नहीं पाया है....'

'व्यर्थ की शङ्का कर रहे हैं आप....मि० बिलफोर्ड !....'

'आप शायद उस भिखारी को जानते हों जो अक्सर भीख माँगने आपके पास आया करता है?....'

'उसको जानने की कोशिश नहीं की मैंने। भिखारी समझ कर पैसे दे दिया करता था....'

'तो अब समझ लें, वह बलवाइयों का सरदार था और इस समय हमारी कैद में है...'

अब लाल चौंके बिना न रह सका। चिल्लाकर बोला—'नहीं, यह कभी नहीं हो सकता...तुम लोग उन्हें कभी नहीं पकड़ सकते बिलफोर्ड?' और तुरन्त ही उसका हाथ जेब में रखी रिवाल्वर लिए बाहर निकलने लगा।

'खबरदार! जेब की चीज जेब में ही रहने दो मिस्टर लालचन्द? हाथ बाहर निकला तो ठीक न होगा....'

हताश लाल ने देखा कि बिलफोर्ड का रिवाल्वर उसके मस्तक पर सध चुका है। वह लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगा। बिलफोर्ड उसे महान शक्तिशाली, पक्का जासूस लगा।

अब बिलफोर्ड की दृष्टि उस बड़े-से शीशे की ओर थी, जिसके पीछे बाहर की सारी क्रान्ति बन्द थी।

'यह शीशा तो बड़ा अच्छा है मिस्टर लालचन्द ! कहाँ से खरीदा था इसे ?....'

'कलकत्ते से एक मेरा दोस्त लाया था....'

'कौन दोस्त ?...वही भिखारी तो नहीं ?...' हँसा बिलफोर्ड—'क्या मैं उसे वहाँ से उतार कर देख सकता हूँ !'

'जैसी आपकी इच्छा !...' लाल ने कह दिया। इस समय उसका मस्तिष्क तेजी से चक्कर काट रहा था।

जैसे ही बिलफोर्ड उस शीशे की ओर घूमा लाल ने उसके रिवाल्वर वाले हाथ पर अपने पैरों से जोरों का वार किया। बिलफोर्ड भी असावधान नहीं था। चोट खाकर भी उसके हाथ से रिवाल्वर नहीं छूटा और उसने घूमकर लाल की कनपटी पर बायें हाथ से ऐसा घूसा जमाया कि लाल लड़खड़ा कर गिर पड़ा।

बिलफोर्ड क्रोध से बोला—'कल के छोकरे, मेरे मुँह लगते हो ?....'

लाल उठ खड़ा हुआ। हाँफ़ रहा था वह।

'बस सारा बल खत्म हो गया ?'—बिलफोर्ड ने कहा—'इसी बूते पर सरकार से लोहा लेने चले थे ?'

लाल चुप रहा। उसने नजर भी न उठाई।

'लाल इधर देखो....' बिलफोर्ड ने कहा।

इस बार का परिवर्तित स्वर सुनकर लाल एकदम चौंक पड़ा ! उसे अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ। उसने तेजी से आँखें उठाकर बिलफोर्ड की ओर देखा।

तभी बिलफोर्ड ने एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाया।

और लाल दौड़कर उसके पैरों पर गिर पड़ा—'सरदार ! यह कौन-सी परीक्षा ले रहे थे आप ?'

बिलफोर्ड हँसा और लाल को उठाकर अपने कलेजे से लगा लिया। लाल अब तक हाँफ रहा था।

'मेरे बच्चे ! डर गये थे तुम ?'

'मेरी तो जान ही निकल गई थी सरदार। आपका कैद होना सुनकर...'

'मुझे भला ये सरकारी बुलडॉग कभी पा सकते हैं !....' सरदार ने कहा—'इसकी कोई चिन्ता न करो लाल! मैं हमेशा स्वतन्त्र हूँ...इस वेश में एक जरूरी काम से गया था। लौटने पर तुमसे मिलना भी जरूरी था....सोचा कुछ नाटक ही करता चलूँ....'

'बेशक सरदार! रूप और आवाज बदलने में आपको कमाल हासिल है...मुझे तो स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि इस वेश के भीतर आप होंगे....'

दोनों कुर्सी पर बैठ गये।

'तुम्हारे लिये एक जरूरी काम है...'

'कहिये....'

'रेखा के पिता मि० शर्मा की आलमारी में एक पीली फाइल के अन्दर कुछ कागजात हैं। उन्हें तुमको आज रात को ला देना होगा, चाहे जिस तरह से भी हो...'

'मुझे ही यह काम करना होगा ?'

'हाँ तुम्हें ही—और आज ही रात को....मि० शर्मा की कोठी से बाहर आते ही तुम अपने को सुरक्षित पाओगे....मुझे उस फाइल की सख्त जरूरत है...कल सुबह आकर मैं उस फाइल को ले जाऊँगा....'

'वहाँ रेखा है सरदार!....वह मेरी आवाज जरूर पहचान जायगी....अभी उस दिन उसने मुझे टैक्सी वाले के वेश में पहचान लिया था...'

'मुझे अफसोस है कि अभी तुम आवाज बदलने में पूरे चतुर नहीं हो सके, फिर भी तुम्हें यह काम करना ही होगा। मेरे पास इस समय कोई आदमी खाली नहीं....सभी व्यस्त हैं। रेखा तुम्हें

पहचान कर भी अपनी जबान नहीं खोलेगी, इसका तो तुम्हें विश्वास होगा !...'

'जी हाँ !...'

'तो ठीक है....खूब सावधानी से रहना। आलमारी की ताली मि० शर्मा के तकिये के नीचे रहती है...अब मैं वेश बदल कर यहाँ से तुरन्त चला जाना चाहता हूँ....'

सरदार ने अपनी अटैची खोली। एक नकाब और काली पोशाक लाल को देकर बोला—'यह रही तुम्हारी आज की पोशाक, अब तुम जरा दूसरे कमरे में चले जाओ तो मैं वेश बदल लूँ !...'

लाल चला गया। सरदार ने अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया। इसके बाद वह अपना वेश बदलने लगा। पाँच मिनट में बिलफोर्ड के स्थान पर बूढ़ा भिखारी बैठा नजर आया। उसने दरवाजा खोलकर लाल को भीतर बुला लिया।

'कुछ देते हो बच्चा कि भिखारी निराश होकर चला जाय !...' उसने हँसकर कहा।

'भिखारी के लिए लाल की जान हाजिर है....' लाल बोला।

'शाबास !'

भिखारी ने लाल की पीठ ठोंकी और बाहर हो गया।

लाल कुर्सी पर बैठा तो एकाएक उसके हृदय में भिखारी के प्रति कुछ शंका उत्पन्न हो आई। शङ्का का समुचित कारण लाल के पास नहीं था। फिर भी लगा, जैसे इस सरदार के पीछे अवश्य ही कोई विकट रहस्य है, अन्यथा यह अपने आपको कभी गुप्त न रखता।

कौन है यह सरदार ! आज लाल का हृदय उसे जानने के लिए तीव्र रूप से लालायित हो उठा।

वह तेजी से उठा। जेब में पड़े रिवाल्वर को अपने हाथ से

टटोला, बाहर आकर ताला बन्द किया और उस ओर को लपका, जिधर वह भिखारी गया था।

आज लाल भिखारी का पीछा करेगा। आज वह जानकर ही रहेगा कि वह कौन है, कहाँ रहता है, क्या करता है?

काफी दूर आने पर लाल ने भिखारी को देखा। वह बिना किसी से भिक्षा माँगे धीरे-धीरे चला जा रहा था। कभी-कभी हाथ उठाकर संकेत करने लगता था कि लोग उसे पागल समझें।

लाल सोचने लगा—इस सरदार का अभिनय भी खूब होता है। कोई उसे पास से भी देखकर शङ्कित नहीं हो सकता।

अब लाल भिखारी से कुछ ही पीछे रह गया था। भिखारी को गुमान भी न था कि उसका कोई पीछा कर रहा है। शहर की घनी बस्ती खतम हो रही थी और सिविल लाइन्स का सिलसिला शुरू हो गया था। इधर ही बड़े-बड़े अफसरों के बंगले थे।

भिखारी कलेक्टर साहब की कोठी के सामने पहुँच कर रुका।

दूर खड़ा हुआ लाल सब कुछ देख रहा था।

'कौन है तू?...' दरबान ने भिखारी को डाँटा।

'भिखारी हूँ बच्चा! कलेक्टर साहब हैं या नहीं! बड़े धर्मात्मा हैं बेचारे....उन्हें खबर दे दो बेटा! बड़ा नाम सुनकर आया हूँ...'

'जा भाग सूअर कहीं का!....' दरबान ने गाली दी—जाता है या दूँ दो-चार हाथ...'

'बूढ़े पर हाथ उठाओगे बेटा!....धर्मात्मा के दरवाजे पर खड़े होकर जुल्म करोगे....चलाओ हाथ, देखूँ तुम्हारा भी....ज्यादा बक-बक करोगे तो मैं यहीं से साहब को पुकारने लगूँगा...'

'तू तो नाहक झगड़ा करता है रे बूढ़े! भला रात में भी कहीं भीख मिलती है!....जा कल दिन में आना...'

'हाँ, अब तुम ठीक से बोले हो....दरबान क्या बन गये लाट साहबी मिल गई। साधू-सन्तों का जरा भी आदर नहीं। साहब को जाकर यह मेरा कागज दे दो....'

भिखारी ने एक विजटिङ्ग कार्ड निकाल कर दरबान को दे दिया। दरबान भिखारी को विस्मय की दृष्टि से देखता हुआ भीतर चला गया।

साहब अपने कमरे में बैठकर शाम का अखबार देख रहे थे।

'हजूर !...' चपरासी ने कार्ड आगे बढ़ा दिया।

साहब ने लेकर देखा, फिर बोले—'उन्हें अन्दर क्यों नहीं आने दिया ?....'

'वह तो भिखारी है हजूर ! कुछ-कुछ सनकी जैसा है !'

'ओह ! अच्छा मैं खुद चलता हूँ।'

साहब बाहर आये तो भिखारी ने सलाम किया ! साहब बोले—'आइये महात्मा ! बहुत दिनों पर दर्शन मिला...अन्दर आइये !...'

भिखारी साहब के साथ अन्दर जाने लगा तो दरवान के सर पर जोरों की चपत जड़ता हुआ बोला—'देखा, तेरे बाप मेरी कितनी इज्जत करते हैं....और तू है कि कुत्ते का कुत्ता ही रहा...'

बेचारा दरबान खिटपिटा कर रह गया। आश्चर्य भी उसे कम नहीं हुआ, साहब को उस भिखारी की इज्जत करते देखकर।

'बैठिये !' अन्दर आकर कलेक्टर साहब ने भिखारी को आदर के साथ बिठाया।

'पहचानते हैं न मुझे !....' बैठकर भिखारी ने पूछा।

'सिर्फ विजटिङ्ग कार्ड से ही पहचान पाया हूँ...' साहब ने कहा—'लेकिन आवाज और शकल अभी तक मेरे लिए अपरिचित ही है...'

'अब तो पहचान गये....' भिखारी अपनी आवाज बदल कर बोला।

'बेशक, अब कोई शङ्का नहीं रही....आपको इस रूप में देखकर मुझे आश्चर्य होता है....'

'आजकल जो न हो जाय, वह थोड़ा...' भिखारी हँसकर

बोला—'आप तो मुझे इस बेश में पहले ही पहल देख रहे हैं मगर मैं अक्सर ऐसा ही बनकर निकलता हूँ आजकल !...'

'अच्छा !....' साहब ने आश्चर्य प्रदर्शित किया—'इसकी कोई खास वजह है क्या ?'

'तभी तो !....' बोला भिखारी—'नाम के कोरे जासूसों से कुछ होगा नहीं और पुलिस वाले तो अपने आलस्य के लिए मशहूर हैं ही....लाचार होकर मुझे ही मैदानेजङ्ग में कूदना पड़ा...'

'तो आप क्रान्तिकारियों को पकड़ने निकले हैं इस रूप में ?'

'क्या करता !....मजबूरी जो न करा डाले...अगर कभी क्रान्तिकारियों का एक बच्चा भी पकड़ पाया तो जानूँगा यह रूप सफल हुआ....'

'ईश्वर आपकी मदद करे....मेरी भी कभी जरूरत पड़े तो याद करेंगे....'

'जरूर ! आपका ही तो सहारा है...अब मुझे जाना है.... आप मेरे इस वेश और आवाज को ठिकाने से देख-सुन लें, ताकि अगर कभी शङ्का में पकड़ा जाऊँ तो अपना भेद खोलने की जरूरत न पड़े, केवल आपकी शिनाख्त पर ही छोड़ दिया जाऊँ.... इसलिए आपको आज अपनी यह सूरत दिखाई है...'

'आप निश्चिन्त रहें...' साहब ने कहा।

'आप बैठिये अब...' इस बार भिखारी की आवाज एकदम बदल गई थी।

कलेक्टर साहब ने हाथ मिलाया। भिखारी बाहर निकल कर चल पड़ा। लाल बँगले से कुछ दूर पर खड़ा-खड़ा ऊब रहा था। नाना प्रकार की विचारधारायें उसके मस्तिष्क में उठ रही थीं। यह भिखारी, क्रान्तिकारियों का सरदार, उत्तरोत्तर, उसके लिए दुर्भेद्य बनता जा रहा था।

वह कलेक्टर के बँगले में क्यों गया है, उसका वहाँ क्या काम है ?....सोचते-सोचते लाल का दिमाग भन्ना उठा था।

तभी भिखारी को बँगले से बाहर आते देखकर लाल को सन्तोष हुआ। भिखारी उसी तरफ आ रहा था। लाल झपट कर एक पेड़ के पीछे छिप गया।

यह भिखारी कलेक्टर के बँगले पर क्यों गया था ? क्या सचमुच वास्तविक सरदार गिरफ्तार हो चुका है और उसका रूप पकड़े हुए यह कोई सरकारी जासूस है।

भिखारी पास आ गया था। लाल विचार सागर में गोते लगा रहा था। एकाएक कोई दृढ़ संकल्प करके उसने अपना रिवाल्वर निकाल लिया। भिखारी पेड़ के पास से गुजर रहा था। लाल ने अपना रिवाल्वर वाला हाथ ऊँचा किया।

तभी—'खबरदार लाल...मैंने तुम्हें देख लिया है। चुपचाप मेरे पीछे-पीछे आओ....' भिखारी इस तरह से कहता हुआ चला गया, जैसे कोई पागल हवा को डाँट रहा हो।

लाल से कुछ करते न बना। उसने रिवाल्वर जेब में रख लिया और चुपचाप भिखारी के पीछे थोड़ी दूर पर चलने लगा। एक जगह अँधेरे कोने में आकर भिखारी रुक गया। लाल भी पास आ गया।

भिखारी ने उसका हाथ पकड़ लिया। लाल को लगा, जैसे उसकी कलाई लोहे की हथकड़ियों में जा पड़ी हो।

'तुम्हें आज मुझ पर शङ्का हुई लाल ! ऐसा क्यों हुआ ?.... लो मुझे पहचान लो...' कहकर एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाने लगा वह।

'मैं शरमिन्दा हूँ सरदार !....'

'मुझ पर शंका मत करो लाल ! मेरा परिचय वक्त आने पर ही तुम जानोगे। उसी समय तुम मेरी असली सूरत देखोगे और

असली आवाज भी सुनोगे....उसके पहले कभी नहीं....मैं आज तुम्हें सावधान करता हुँ...फिर कभी ऐसी गलती मत करना। याद रखो मेरे शरीर के रोम-रोम में आँखें हैं....'

'मुझे क्षमा करें सरदार !....'

'तुम इस समय सीधे अपने घर जाओ....' सरदार ने कहा—'ठीक १२ बजे तुम्हें मि० शर्मा के घर में घुसना है। मैं भी इस समय मि० शर्मा से ही भेंट करूँगा और कोई नया सुराग मिला तो तुम्हें सूचित कर दूँगा....'

और वह सर हिलाता चला गया।

● ●

इधर कई दिनों तक लगातार रात-दिन दौड़ते रहने पर आज मि० शर्मा को थोड़ा-सा आराम मिला था। कई रात के जगे-पिसे थे सो आज ऐसी नींद आई है कि जवानी में भी वे उस तरह से क्या सोये रहे होंगे ?

रात अपनी काली चादर फैलाये है। रेखा जग रही है। अँधेरे में लिहाफ से लिपटी पड़ी है परन्तु लाल से अलग रहकर सोना चाहने पर भी वह सो नहीं पाती। कितनी विवश है रेखा !

खटका हुआ, रेखा ने लिहाफ से अपना सर बाहर कर लिया। लगा जैसे कोई आदमी धीरे-धीरे सीढ़ी उतर रहा है। रेखा चौंक पड़ी। धीरे से उठकर पलंग पर बैठ गई।

अवश्य कोई आदमी सीढ़ी पर था। चाहे जो हो, चोर भी हो सकता है, क्रान्तिकारी भी, डाकू भी।

रेखा उठकर खड़ी हो गई। बन्द किवाड़ थोड़ा-सा खोलकर देखने लगी। तभी कोई काली छाया उधर से दबे पाँव आकर उसके पिता के कमरे की ओर बढ़ गई। वह चुपचाप वहीं खड़ी रही ! उसके कान अपने पिता के कमरे की ओर लगे हुए थे।

वह काली छाया मि० शर्मा के दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई। कुछ आहट ली उसने और जब उसे विश्वास हो गया कि वह निरापद ढङ्ग से यहाँ आ गई है तो धीरे से बन्द दरवाजे को पीछे की ओर ढकेला। दरवाजा भीतर से खुला था, अब पूरा खुल गया। छाया दबे पाँव भीतर घुसी।

घोर अन्धकार था। अँधेरे के बीच किसी सोये हुए आदमी की नाक बज रही थी। छाया ने नाक की आवाज से यह अन्दाज लगा लिया कि मि० शर्मा के पलंग का सिरहाना किधर है, क्योंकि उनकी तकिया के नीचे से ही तो उसे आलमारी की चाभी लेनी थी, जिसमें वह पीली फाइल रखी थी।

अब वह काली छाया मि० शर्मा के सिरहाने थी। उसके हाथ में सजग रिवाल्वर था। उसका बायाँ हाथ धीरे-धीरे तकिया की ओर बढ़ा और दाहिने हाथ का रिवाल्वर झुककर मि० शर्मा के मस्तक से एक इञ्च ऊपर तक आ गया।

छाया का हाथ तकिया तक पहुँच गया। ताली का ठण्ढा स्पर्श उसने महसूस किया। ताली उसकी मुट्ठी में थी। मगर पुलिस का आदमी कितनी भी नींद में क्यों न हो खतरे का आभास उसे मिल ही जाता है। काली छाया ने ज्योंही अपना बायाँ हाथ तकिये के नीचे से खींचना चाहा, त्योंही मि० शर्मा की नींद खुल गई। खतरे की सूचना उन्हें नींद में ही मिल चुकी थी।

वे चिल्ला पड़े—'कौन है ?....रेखा ! तू है क्या ?...'

तभी छाया का रिवाल्वर एक इञ्च और नीचे उतर कर उनके मस्तक पर आ बैठा और गम्भीर स्वर सुनाई पड़ा—'चुप रहो मि० शर्मा ! धीरे से उठ बैठो पलंग पर...'

मि० शर्मा अब पूरे होश में थे। रिवाल्वर के आगे वे विवश थे। छाया धीरे-धीरे अपना रिवाल्वर ऊपर उठाती गई और मि० शर्मा भी उसी गति से ऊपर उठते गये।

अब वे पलंग पर बैठ चुके थे। छाया का रिवाल्वर उनके मस्तक से हटकर सर के पिछले भाग पर आ लगा था।

'क्या चाहते हो तुम !...'

'वह पीली फाइल !....' छाया बोली।

'पीली फाइल !....' मि० शर्मा चौंक पड़े—'पीली फाइल मैंने कलेक्टर साहब के पास भेज दी है....'

'तुम झूठ बोल रहे हो....' छाया का रिवाल्वर हिला—'वह फाइल तुम्हारी आलमारी में है....उठो, देर न करो...किसी से सहायता पाने की आशा छोड़ो। इस समय मेरे दोनों हाथों में रिवाल्वर है। एक तुम्हारे लिए, दूसरा दौड़कर आने वाले तुम्हारे सहायकों के लिए....'

लाचार मि० शर्मा उठे। ताली उठाकर एक आलमारी की ओर बढ़े। छाया उनके ठीक पीछे थी और उसका रिवाल्वर अब भी उनकी खोपड़ी के पीछे चल रहा था।

'इधर नहीं....इस आलमारी में तो तुम्हारा रिवाल्वर रखा है...मैं जानता हूँ पीली फाइल उस आलमारी में है....'

मि० शर्मा हैरान थे क्रान्तिकारियों की भयंकर जासूसी पर, जो उनके घर की एक-एक चीज का पता रखते हैं।

वे दूसरी आलमारी की ओर बढ़े! तभी बिजली का बटन खटका और भक्क से उजाला हो गया।

रेखा की आवाज आई—'आपने मुझे बुलाया है पिताजी!'

'खबरदार लड़की !....हाथ ऊपर कर....'

रेखा ने सर उठाकर अपने पिता की ओर देखा, फिर उनके पीछे खड़े हुए नकाबपोश को, फिर उसके हाथ के दोनों रिवाल्वरों को, उसने हाथ चुपचाप ऊपर कर दिये।

रेखा नकाबपोश को देख रही थी और नकाबपोश रेखा को.... मि० शर्मा ने इसे लक्ष्य किया। एक क्षण की असावधानी भी उनके लिए पर्याप्त थी।

उन्होंने घूमकर अपने सर के पीछे वाला नकाबपोश का हाथ मजबूती से पकड़ लिया। नकाबपोश तुरन्त ही चैतन्य हुआ मगर मि० शर्मा से अपना रिवाल्वर वाला हाथ छुड़ा लेना उसके लिए सहज नहीं जान पड़ा। अगर वह रेखा की ओर से अपना रिवाल्वर हटाता है तो हो सकता है रेखा ही कोई उत्पात करे....इधर अगर अधिक देर हो जाती है तो खतरे की सम्भावना है।

'मि० शर्मा! मेरा हाथ छोड़ दो... छोड़ दो...नहीं तो मैं तुम्हारी लड़की को गोली मार दूँगा....गोली मार दूँगा....गोली....'

धायँ! नकाबपोश का रिवाल्वर गरजा। रेखा चीख कर गिर पड़ी। मि० शर्मा उसका हाथ छोड़ रेखा की ओर दौड़े।

नकाबपोश ने उन्हें बीच ही में रोक लिया—'पहले वह पीली फाइल मुझे दे दो...'

'निर्दयी, हत्यारे, खूनी!....ले फाइल!...बेटी ही न रही तो फाइल, नौकरी, कुछ भी नहीं....' मि० शर्मा ने फाइल निकाल कर नकाबपोश के मुख पर फेंक दी।

नकाबपोश उसे उठाकर भाग चला। मि० शर्मा रेखा की ओर दौड़े—'मेरी बच्ची!...मेरी बेटी....मेरी रेखा!....' वे चिल्लाये।

'पिताजी!...' रेखा उठ बैठी—'मैं तो बिल्कुल ठीक हूँ...'

'अरे....तू बिल्कुल ठीक है? कहीं चोट तो नहीं आई तुझे?'

'जरा भी नहीं पिताजी! उसकी गोली छूटने के पहले ही मैं चीखकर गिर पड़ी थी....'

'तू बड़ी पाजी है रेखा! अगर तू चीखकर गिरी न होती तो मैं कभी न बौखलाता और उस कम्बख्त का हाथ भी न छोड़ता... उफ्! बड़े जरूरी कागजात ले भागा शैतान!....'

'अगर मैं खड़ी रह जाती तो उसकी गोली सीधी मेरे कलेजे में आ लगती....तब आपके कागजात बच जाते, भले ही रेखा चल बसती....'

'अच्छा, जो हुआ उसका गम मत कर...'

तभी दाई भी आ पहुँची, सब हाल सुनकर हाय-हाय करने लगी। रेखा को उसने गोद में लेकर दुलारा-चूमा, जैसे आज नई रेखा ने जन्म लिया हो।

मि० शर्मा कलेक्टर को फोन करने चले गये। लौट रहे थे तो किसी ने दरवाजा भड़काया। खोलकर देखा तो लाल था।

'क्या है बाबूजी!...गोली छूटने की आवाज कैसी थी?'

'बड़ी भयानक घटना घट गई बेटा! घर में एक डाकू घुस आया था। मेरे कुछ कागजात ले भागा। जाते समय उसने गोली भी चलाई। खैर हुआ कि रेखा बाल-बाल बच गई। वह शैतान गोली छूटने के पहले ही डर से चीखकर गिर पड़ी थी और जब तक वह डाकू बाहर न निकल गया, तब तक उसने साँस भी न ली....पुलिस कप्तान की बेटी इतनी डरपोक!....'कहकर मि० शर्मा हँसने लगे।

लाल लौट चला। उसे सन्तोष था कि उसकी गोली ने इतनी शराफत तो दिखाई कि रेखा को न लगकर ऊपर ही ऊपर उड़ गई।

वह सड़क पर बढ़ चला। ठण्ढक में कुछ चहलकदमी करके वह अपने अन्तर की गर्मी मिटाना चाहता था।

न जाने कैसे लाल के रिवाल्वर ने गोली उगल दिया! शायद कर्तव्य की प्रेरणा ने उसे बाध्य कर दिया हो गोली चलाने के लिए। रेखा, जो लाल के इतने समीप है, अब तक गोली खाकर बहुत दूर जा चुकी होती, रेखा की मधुर-वाणी उसे कभी सुनाई न देती। मर कर रेखा उसे ऐसी चोट देती जिसका घाव दिखाई न देता मगर हृदय के भीतर ही भीतर सड़ता चला जाता। लाल की क्रान्ति नष्ट हो जाती। वह पङ्गु हो जाता।

तब आज का जीवित लाल कल को मृतक बन जाता।

हवा कुछ तेज हो चली, लाल ने बदन की चादर कसकर लपेट

ली। उसके अन्तर की गर्मी दूर हो चली और आँखों से पश्चात्ताप के आँसू बह निकले।

उसने मुट्ठी बाँधकर अपनी आँखें जोरों से मींची !

नहीं वह रोये क्यों, वह आँसू क्यों बहाये ?

वह तो फौलाद का बना है। अगर फौलाद का टुकड़ा जरा-सी चोट खाकर मुड़ जाय तो उसका मूल्य ही क्या ! क्रान्तिदूत को जड़ होना चाहिये, सुख-दुख की अनुभूति से परे। चेतना हो तो केवल इतनी कि आँखों को केवल एक मार्ग दिखाई दे, क्रान्ति मार्ग, लपटों से घिरा, ज्वालाओं से प्रज्ज्वलित, कण्टकित, भयानक !

लाल ने अपने दिल को सँभाल लिया। फौलाद, फौलाद बन गया। पिघलने नहीं दिया उसने अपने हृदय को।

वह लौट पड़ा, तेजी के साथ अपने घर की ओर। शायद सरदार इसी समय पीली फाइल लेने आये हों।

काफी तेजी से चलता हुआ वह अपने दरवाजे पर पहुँच गया। ताला खोलकर भीतर प्रविष्ट हुआ।

तभी उसे लगा, जैसे उस कमरे में और भी कोई हो।

'कौन है !....' लाल बोला और एक क्षण में ही उसकी जेब का रिवाल्वर हाथ में था।

कोई आवाज नहीं आई। लाल ने तुरन्त स्विच दबाकर बल्ब जलाया। देखा—कोई न था।

'म्याऊँ !' कोई बोला। और लाल का रिवाल्वर तुरन्त उस ओर घूम गया। एक काली-सी बिल्ली 'म्याऊँ' कहती हुई दूसरे कमरे में भाग गई।

उसने रिवाल्वर जेब में रखा, फिर उस बड़े-से शीशे के सामने आ खड़ा हुआ। शीशा हटाकर उसने गुप्त आलमारी में से वह पीली फाइल उठाई और कुर्सी पर आ बैठा।

यदि सरदार ने उसे वह फाइल देखने को मना कर दिया होता तो वह कभी देखने की चेष्टा न करता। परन्तु उन्होंने उसे ऐसी कोई आज्ञा नहीं दी थी, अतः वह उसे देखने का लोभ संवरण न कर सका।

ज्यों-ज्यों वह उस फाइल के कागज देखता गया, त्यों-त्यों उसका आश्चर्य बढ़ता गया।

सरकार के हाथ मण्डल की एक शाखा का पूरा भेद आ गया था। सदस्यों की नामावली और हर एक का पूरा पता भी साथ था। सोचने लगा लाल—ये कागज सरकार के हाथ शायद आज ही लगे हैं, नहीं तो अब तक आफत आ चुकी होती।

आश्चर्य में डूबा हुआ लाल पूर्णतया बेखबर था।

उसकी कुर्सी की पीठ उस बड़ी-सी आलमारी के सामने थी, जिसमें वह अपने कपड़े तथा अन्य सामान रखा करता था।

कपड़े वाली बड़ी आलमारी के पीछे कोई चीज हिली और एक काले सर ने जरा-सा बाहर होकर देख लिया कि लाल पूरा बेखबर है।

अब उस काले सर का काला शरीर भी धीरे-धीरे बाहर आने लगा। आलमारी के पीछे से निकलकर वह लाल के ठीक पीछे आ खड़ा हुआ। हाथ में एक रिवाल्वर भी दिखाई पड़ रहा था।

नकाबपोश का रिवाल्वर वाला हाथ ऊपर उठा। उसने रिवाल्वर को उल्टा पकड़ लिया और उसकी मूठ आगे कर दी।

जैसे ही लाल ने फाइल बन्द की—तैसे ही...धप्प! नकाबपोश के रिवाल्वर की मूठ भरपूर जोर से लाल के सर पर पड़ी।

लाल का सर चकरा गया। उसने उठना चाहा। उसका हाथ तेजी के साथ जेब में गया रिवाल्वर निकालने के लिए—

मगर—धप्प! धप्प! धप्प!...

नकाबपोश के रिवाल्वर की मूँठ तेजी के साथ उसके सर पर

पड़ती गईं और लाल को असह्य चोट से बेहोश हो जाना पड़ा। उसका सर कुर्सी पर बैठे-बैठे लटक गया।

अब नकाबपोश उसके सामने आ गया। उसने वह पीली फाइल उठा ली और उलट कर देखा उसे। अपने लबादे के भीतर यत्नपूर्वक रख लिया और लाल की ओर एक नजर डालकर वह तेजी के साथ बाहर निकल गया।

दस मिनट तक लाल बेहोश रहा। धीरे-धीरे उसकी चेतना लौटने लगी। थोड़ी देर में उसका मस्तिष्क ठीक हो गया।

उसने चारों तरफ नजर दौड़ाई। पीली फाइल गायब थी।

अब क्या करे लाल ? सरदार को वह क्या जवाब देगा ? पीली फाइल की जगह वह उन्हें अपना पीला चेहरा कैसे दिखायेगा !

लाल के मस्तक में तेज पीड़ा हो रही थी। उसने बोरिक-काटन निकालकर घाव पोंछा, फिर थोड़ी-सी टिञ्चर आयोडीन लगाकर पट्टी बाँध ली। बैठे रहना अब उसके लिए कठिन था।

अपना कुर्ता बदल कर वह चारपाई पर जा लेटा। कम्बल ऊपर डाल दिया। बल्ब जलता ही रहा।

सुबह होने को आई, तब लाल की पलकें बोझिल हुईं। सोया भी तो चैन की नींद नहीं। अनेक दुश्चिन्तायें स्वप्न की छाया बनकर मानस-पटल पर नृत्य करती रहीं।

आठ बज गये परन्तु लाल की निद्रालस आँखें नहीं खुलीं !

किसी ने उसका दरवाजा बाहर से ठेला। भीतर से खुले दरवाजे और भी खुल गये।

'लाल भैया !' रेखा का स्वर था विनम्र किन्तु गम्भीर।

लाल जगा नहीं। रेखा आगे बढ़ आई। लाल की चारपाई के पास आ खड़ी हुई।

'आज बहुत सो रहे हो लाल भैया !...' बोली वह।

तभी लाल की नींद खुल गई। धीरे से उठ बैठा वह। रेखा को देखकर आश्चर्य हुआ उसे। कैसी लड़की है कि इसकी नाराजी और खुशी का कभी पता ही नहीं चलता।

रेखा की दृष्टि लाल के सर पर बँधी पट्टी की ओर गई।

वह चीख पड़ी—'यह पट्टी कैसी बाँध रखी है लाल भैया!'

'चोट लग गई थी रेखा!....' बोला लाल।

रेखा तड़प उठी। दौड़कर लाल के पीछे चारपाई पर बैठ गई। लाल के सर की पट्टी छूकर देखने लगी।

'लाल भैया! चोट बहुत ज्यादा लगी है क्या? कैसे चोट लग गई तुम्हें?....'

'यूँ ही—ठोकर खाकर गिर पड़ा था....'

'तुम तो बहुत सँभल कर चलते हो लाल भैया!..अपनी रेखा, अपनी छाया से भी सावधान रहते हो तुम....बड़ा आश्चर्य हो रहा है मुझे...मुझसे छिपाने की कोई बात हो तो मैं नहीं पूछती, तुम बताओगे भी नहीं....रेखा का कब-कब मान रखा है तुमने! रेखा ही रूठी है और रेखा ने ही खुद को मनाया भी है..लाल भैया तो पत्थर की मूर्ति बने पूजा लेते हैं, मुँह में शायद जबान नहीं कि बरदान दे सकें कोई....' बोली रेखा।

'मैं तुझसे कुछ नहीं छिपा रहा हूँ रेखा! सचमुच मुझे ठोकर लग गई थी....'

'इसीलिए तो मेरी आँखें रो देती हैं कि तुम बताना नहीं चाहते तो बहला देना चाहते हो....जाने दो...लाओ इस पर पट्टी बाँध दूँ...क्या लगाया है?....'

'टिञ्चर आयोडिन!'

'मेरे पास जम्बक है....अभी लाई...' कहकर रेखा उठी और बाहर दौड़ गई। लाल उसे रोक भी न सका।

थोड़ी देर में वह जम्बक की डिबिया लेकर लौटी।

लाल के इनकार करने पर भी उसने सर की पट्टी खोली, घाव धोया और जम्बक लगाकर ही छोड़ा।

'लाल भैया !....' एकाएक ही रेखा के होंठ खुले।

'क्या है !....तू आज बहुत गम्भीर लग रही है रेखा !....'

'आखिरी बार मिलने आई हूँ लाल भैया !....' रेखा का स्वर अत्यन्त करुण हो रहा था—'आज के बाद शायद तुम रेखा को कभी देख न सको...जो कहना हो, वह कह डालो....रेखा से जो कुछ पाना चाहो, माँग लो...आज ही....अभी....'

'तेरा जी अच्छा नही है क्या !....तू कैसी बातें कर रही है !'

'आजकल जिन्दगी का कोई ठिकाना नहीं लाल भैया !.... पुलिस अफसर की बेटी हूँ। बाप के दुश्मन हजार तो बेटी कब तक बची रह सकती है ! गेहूँ के साथ घुन भी पीसा ही जाता है और तभी शायद....'

'तुझे क्या खतरा है रेखा !'

'क्या बताऊँ !....खतरा कभी कहकर नहीं आता भैया !.... खतरा तो भविष्य की गोद में छिपा रहता है और भविष्य की गोद इतनी अन्धकारमयी है कि ज्योतिषियों की आँखें भी पग-पग पर धोखा खा जाती हैं...'

'बड़ी गोल-मोल बातें करती है तू रेखा ! पहले तो एकदम आईने जैसी बातें करती थी....'

'करती थी, बहुत पहले भैया ! मगर तुम्हारे उस बड़े-से आईने में सूरत देखकर किसका मस्तिष्क ठीक रह सकता है....अपने को ही देखो, तुम रोज उस आईने में अपने को देखते हो तो अब ठोकरें भी खाने लगे हो....पहले भी लाल ने कभी ठोकरें खाई हो, ऐसी बात रेखा के कानों में नहीं पड़ी....मेरा खतरा तुम पूछते थे न लाल भैया !....तुम्हें देखने की लालसा थी सो बच गई, नहीं तो आज रात को ही गोली लग चुकी थी...'

'मुझे मालूम है रेखा ! मैं गोली की आवाज सुनकर तेरे घर गया था और पिताजी से पूछकर लौट आया था...' लाल ने कहा ।

एक क्षण के लिए लाल की गोद में लेटी हुई रेखा की आँखें ऊपर उठीं—'तुम लौट क्यों आये थे लाल भैया ! रेखा से इतनी रुष्टता क्यों ?....तुमने सुना कि रेखा भली-चङ्गी है इसलिए लौट आये । रेखा मर चुकी होती तो उसे चिता तक ले चलने के लिए ठहर जाते । है न लाल भैया ?'

लाल ने रेखा के पतले-पतले होठों पर अपने हाथ रख दिये—

'तू इतनी निराशावादी कब से हो गई ?'

'आशा का सम्बल जब टूट जाता है लाल भैया तो निराशा ही हाथ लगती है....आशा की खोज मैंने की थी और जब निराशा हाथ आ लगी तो उसी से सन्तोष कर बैठी हूँ ..तुम रूठे न होते तो किसकी मजाल थी जो तुम्हारी रेखा को रिवाल्वर के सामने ला सकता....तुम नाखुश हो तो रेखा के जान की कीमत ही क्या रही ?'

लाल कुछ बोला नहीं । रेखा की आँखों में आँसू तैर आये । धारा गालों पर फूट पड़ी ।

बोली वह—'लाल भैया ! तुम्हें उस पीली फाइल की जरूरत थी तो तुमने मुझसे क्यों नहीं कहा ?... क्यों अपनी जान खतरे में डालने गये तुम ?....पिताजी पहचान लेते तो तुम्हें क्या समझते । रेखा किस मुख से तुम्हारी सिफारिश करती उनसे ? यदि तुम मेरी जान की भूख ही लेकर वहाँ गए थे तो तुम यों भी अपनी भूख मिटा सकते थे...आजमाना चाहो तो निकालो रिवाल्वर लाल भैया ! कर दो मेरा कलेजा टुकड़े-टुकड़े । देखो, रेखा के मुख पर कोई शिकन आती है !'

रेखा हिचकियाँ लेने लगी । लाल ने उसका सर अपनी

गोद से उठाकर कलेजे पर दाब लिया।

बोला—'मेरी रेखा!...मेरी बच्ची!...तू कुछ दूसरा ख्याल मत कर। मैं जानता था कि तू मुझे पहचान लेगी, फिर भी मुझे तुझ पर विश्वास था....'

'विश्वास था तभी तो गोली दाग दी....' रेखा ने कहा—'सच जानो लाल भैया! अगर मैं झूठ-मूठ चिल्लाकर गिरी न होती तो पिताजी तुम्हें बेकाबू कर देते....' सोची थी, मैं रूठ जाऊँगी तो तुम्हें मेरा अभाव खलेगा और तुम मेरी कीमत समझोगे...मगर पत्थर का पुतला हिला भी तो जान का भूखा बन गया...'

तभी बाहर से—'कुछ मिल जाय मालिक!' किसी ने आवाज दी।

'लो, मैं चल दी लाल भैया!' रेखा उठ गई—'तुम्हारे भिखारी बाबा आ गये। एक दिन तुमने भीख क्या दे दी, यह बूढ़ा परच गया....देखो, इससे ज्यादा देर तक बातें मत करना... यह भिखारी मुझे अच्छा नही लगता। हमेशा तुम्हें देखकर अपना सर खुजलाने लगता है लाल भैया!'

रेखा का अन्तिम वाक्य सुनकर लाल चौंका मगर रेखा जा चुकी थो। बाहर आकर रेखा ने देखा उस बूढ़े भिखारी को, बोली—'गुडमार्निङ्ग भिखारी साहब!...लाल भैया खुजली की दवा लेकर बैठे हैं, अन्दर जाओ....'

कहकर रेखा ने एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाया और हँसकर निकल गई। भिखारी का बूढ़ा चेहरा तमतमा आया। उसने इधर-उधर देखा फिर तेजी के साथ लाल के कमरे में घुस गया।

'लाल!...' भिखारी की एक उँगली उसके मस्तक पर थी—'रेखा ने मुझे देखकर अपना मस्तक क्यों खुजलाया! इसमें

क्या भेद है !...तुमने उससे मेरे विषय में क्या कहा है !'

'आप शान्त हों सरदार ! मैंने उससे कुछ नहीं बतलाया है। वह अजीब लड़की है ! पता नहीं कैसे शक कर लेती है...'

'शक कर लेती है या तुम्हारी जबान उससे कह देती है...'

'मेरी जबान पर अविश्वास हो तो काट लें उसे आप.... आपका सन्देह मिट जाय....'

'लाओ, पीली फाइल कहाँ है...'

'फाइल कोई मेरे यहाँ से उठा ले गया सरदार !....'

'उठा ले गया ?... ' सरदार आगे बढ़ आया—'या तुमने रेखा के कारण उसे वहीं छोड़ दिया...'

'उफ् !...' लाल का सर चकरा गया।

धम्म से वह कुर्सी पर गिर पड़ा। सरदार थोड़ी देर तक लाल के सर में बँधी हुई पट्टी को देखता रहा।

फिर पूछा—'सर में यह पट्टी कैसी !'

'किसी ने मुझे घायल करके बेहोश कर दिया था और वह पीली फाइल उठा ले गया....'

'कौन था वह !'

'मैंने नहीं देखा सरदार !...मुझे वह दिखाई न पड़ा....'

'क्यों !....वह लुप्त होकर आया था या तुम्हारी आँखें बन्द थीं....'

'उसने पीछे से वार किया था सरदार ! मैं सँभल न सका.... बेहोश हो गया...'

'इसी कमरे में यह घटना हुई और तुम इतने लापरवाह रहे .रात में कब की बात है यह !'

'लगभग दो बजे की...मैं कुर्सी पर बैठा हुआ पीली फाइल देख रहा था...'

'क्यों !....उसे देखने से तुम्हारा क्या प्रयोजन था ! उसे

देखने की आज्ञा तुम्हें किसने दी थी ?'

'आपने मना भी तो नहीं किया था सरदार !'

'और मैंने यह कब कहा था कि तुम उसे पढ़ना ? तुम्हारे काम की चीज तो वह थी नहीं....तुमने उसे क्यों देखा। अगर तुम फाइल न देखते होते तो आक्रमणकारी का यह पता भी न चलता कि उसे तुमने कहाँ रखा है...'

'मुझसे गलती हुई सरदार ! मैं अपना अपराध स्वीकार करता हूँ....'

'गलती तो चन्द्रनाथ से भी हुई थी, उसका परिणाम तुम सुन चुके हो....'

'मगर चन्द्रनाथ ने जान-बूझकर गलती की थी सरदार ! मैं तो विवश था...'

'क्या बकते हो लाल ! क्या तुम्हारा यह मतलब है कि उस पीली फाइल को देखने के लिए किसी ने तुम्हें विवश किया ?'

'जी नहीं, बल्कि आक्रमणकारी मुझे बेहोश करके ही वह फाइल ले गया....' लाल ने कहा।

'लाल....' सरदार का स्वर कुछ नम्र हो गया—'आज मुझे तुम्हारी बातों पर विश्वास नहीं हो रहा है... मैं इस मामले की छान-बीन करूँगा....अगर तुम अपराधी प्रमाणित हुए तो मेरे हाथ से कभी न बच सकोगे, चाहे जहाँ तुम रहो...'

'अगर मेरा अपराध आप प्रमाणित कर सकेंगे तो मैं हमेशा दण्ड भोगने को प्रस्तुत रहूँगा सरदार !'

'ठीक है....पता नहीं वह फाइल किसके हाथ पड़ी ?'

'किसी सरकारी जासूस के हाथ लगी होगी....'

'मूर्ख हो तुम लाल !....सरकार के हाथ फाइल लगी होती तो अब तक तुम यहाँ न दिखाई पड़ते और मण्डल की वह शाखा तो तुरन्त ध्वस्त हो गई होती....मैं विचार कर रहा हूँ....शायद वही

ले गया हो, जिसने तुमसे पहले ही जज का खून कर डाला था....'

'ओह !....' लाल विस्मय से भर उठा—'उसकी तो याद मैं बिलकुल ही भूल गया था। वही ले गया होगा....मगर ले क्यों गया। वह पीली फाइल उसके किस काम आयेगी !...'

'यह तो वह जाने, जो ले गया है...मगर लाल ! इस रेखा का यहाँ आना मुझे पसन्द नहीं...'

'क्यों !...'

'वह मुझे अच्छी नहीं लगती....'

'अजीब बात है सरदार !....' लाल ने कहा—'अभी वह भी कह रही थी कि यह भिखारी मुझे अच्छा नहीं लगता....क्या कारण है !....मैं जब तक यहाँ रहूँगा, वह मेरे पास आयेगी ही, वह रूठ भी जाती है और फिर मनाने भी आती है....उसको कहा क्या जाय ! लड़की भी बड़ी हठी है....'

'मैं तुम्हें रेखा से दूर ले जाने की कोशिश करूँगा....' सरदार उठखड़ा हुआ—'तुम अपने जरूरी सामान तैयार रखो ! किसी भी समय मेरी आज्ञा मिलते ही तुम्हें यह मकान छोड़ना होगा...'

'बहुत अच्छा !...' लाल ने दबी आवाज से कहा।

भिखारी बाहर निकल कर चल पड़ा। रेखा अपने दरवाजे पर खड़ी थी। भिखारी ने उसे देखा तो सड़क के उस पार की पटरी पकड़ ली, ताकि वह फिर कोई शैतानी न कर सके।

मगर रेखा ने उसे देख ही लिया, जैसे वह उसी के इन्तजार में खड़ी रही हो। पुकार बैठी—'भिखारी !....ओ भिखारी साहब !...ओ बूढ़े बाबा !....'

भिखारी को रुकना पड़ा !

लौटकर रेखा के सामने आ खड़ा हुआ—'क्या है बच्ची !'

'अरे भिखारी बाबा, इधर भी भीख देने वाले लोग रहते हैं... उधर ही से क्यों चले जाते हो !...'

'पेट भरने को मिल जाता है बेटी तो अधिक नहीं माँगता। सोचता हूँ जुटाकर कोई सेठ तो बनना है नहीं....'

'ठीक है भिखारी !....लाल भैया के पास आकर भी तुम्हारा पेट न भरे तो कहाँ भरेगा....कभी इधर से भी भिक्षा ले लिया करो....लाल भैया तुम्हारा पेट भर सकते हैं तो रेखा के दरवाजे से भी कभी भूखे नहीं जाओगे। लाल से कम रेखा की ताकत नहीं, देखना चाहो तो कभी आजमा लेना....'

'भिखारी क्या आजमायेगा बेटी! कुछ देना हो तो ला दे, चलूँ, कहीं पका-खाकर पेट भरूँ...'

'देने के लिए ही तो तुम्हें बुलाया है बाबा! और ऐसी चीज दूँगी तुम्हें कि पकाने की जरूरत ही न पड़े, पका-पकाया तैयार, सिर्फ खाने की देर!....लाल भैया की तरह तुम्हें ताँबे का पैसा नहीं दूँगी कि तुम्हारे बूढ़े दाँत तोड़ ही न सकें...'

और रेखा अन्दर चली गई। थोड़ी देर बाद लौटी तो उसके हाथ में कपड़े की एक छोटी-सी लम्बी गठरी थी।

'लो बाबा! यह गठरी सँभालो, इसमें थोड़ी-सी रोटियाँ और कई पहनने के कपड़े हैं...तुम बहुत खुश होगे भिखारी! सावधानी से ले जाओ इसे। एक ही दिन में मैंने तुम्हें इतनी भीख दे दी है कि लाल भैया साल भर में भी नहीं दे पाते....'

भिखारी ने गठरी ले ली। बोला—'ईश्वर तुम्हें सुखी रखे बेटी! चाँदनी में नहाओ और रोशनी में पलो...'

चला गया भिखारी। रेखा उसे बड़ी देर तक देखती रही।

'रेखा!....ओ रेखा!....उस मुए बूढ़े को इतनी बड़ी गठरी में क्या दे आई?' दाई ने पूछा।

'तुम्हारा खजाना दे दिया और क्या!....'

'खजाना दिया होगा अपने बाप का...' दाई ने कहा—'हमारे बाप तो मर भी गये और इतनी बड़ी गठरी की शकल न देख

सके....ये भिखमंगे भी आजकल नाबदान के कीड़ों की तरह उतरा पड़े हैं....मेरा बस चले तो एक-एक दो....'

'एक-एक को नहीं! दो-दो कीड़ों को एक साथ मुँह में रखना...' रेखा ने बीच में रोक कर कहा—'तुम जो न कर डालो, वह थोड़ा। बूढ़ी हो गई मगर बूढ़ों को देखकर जलती हो....'

'मुझसे मजाक करती है तू! लुटा दे सब कुछ, अब जो बोलूँ तो कहना! मेरा क्या जाता है? इतनी बड़ी गठरी दे आई, अब मुझसे एेंठ रही है....बोल न, उसमें क्या-क्या था!'

'थोड़ी-सी रोटियाँ और कपड़े, बस यही तो!'

'बस यही तो! जैसे इसका बस चलता तो सारा घर ही लुटा देती....कभी अपनी बिल्ली को दूध पिलाने को कहती हूँ तो इसे बुखार लग जाता है मगर गली के कुत्तों को खिलाने से इसे जुकाम भी नहीं होता...'

'बहुत हुआ दाई, अब मत बिगड़ो....' रेखा हँसकर बोली—'नहीं तो सर में तुम्हारे दर्द हो जायगा....अब कभी किसी भिखारी को कुछ भी नहीं दूँगी...रोज-रोज तो तुम्हीं देती थी....'

'मैं देती थी तो क्या तेरी तरह अन्धी बनकर.... जितनी भीख तूने एक को दी है, उतने में सौ भिखारियों को देती, सौ आशीर्वाद पाती। तू नहीं जानती रेखा!...' बुढ़िया नम्र स्वर में बोली—'ये भिखमंगे रोजगार करते हैं। तुझसे माँगकर दूसरों के हाथ बेच देते हैं....'

'तुम भी शायद यही रोजगार करती थी दाई! है न?

'मैं क्यों भीख माँगती!....मेरी तरह दूसरी कौन होगी? भरी जवानी में छोड़कर वे चले गये! दूसरी औरत होती तो गली-गली का कूड़ा सूँघती....मगर मैं थी कि तुझे देखकर ही दिन बिता दिये....एक तू है कि अभी से लाल के पीछे पीली बनी घूमती है....'

'चुप रहो दाई ! बेकार की बातें तुम्हें बहुत आती हैं...लाल भैया को गली का कूड़ा बनाती हो !'

'ओह ! यह लड़की तो इतनी दूर उड़ जाती है कि पकड़ना मुश्किल !...तेरे लाल को कौन गली का कूड़ा कह रहा है पाजी ! वह तो हीरा है !... जैसे तू, वैसे ही वह !....है न रेखा....'

'है तो, मगर तुम अब कभी ऐसी बात मत किया करो...'

'अच्छा नहीं करूँगी भाई ! तू खुश रह....बूढ़ी दाई मरे चाहे जीये.. अब कहाँ जा रही है !....'

'लाल भैया के पास !'

कहकर रेखा लाल के घर की ओर बढ़ी।

दरवाजे के पास आई तो लाल अपना सामान बाँध रहा था।

रेखा अन्दर आ गई। चारों ओर देखा उसने फिर सामान बाँधते हुए लाल की ओर दृष्टि डाली। लाल सर नीचा किये हुए अपने कार्य में व्यस्त था।

'कहीं की तैयारी है क्या लाल भैया !'

'हाँ, यहाँ से बहुत दूर की...'

'यहाँ से क्यों, रेखा से बहुत दूर कहाँ होता लाल भैया !... ऊब गये हो न मुझसे !....रेखा अगर लोहे की बेड़ी होती तो तुम्हारे पाँवों में पड़कर रोक लेती....फूल की माला है तो गले पड़कर रोकेगी तुम्हें....न जाओ लाल भैया ! रेखा का मन सूना करके अपने मन की मत करो....तुम यहाँ से जाकर रेखा को भूल जाओगे मगर रेखा का हृदय जब तुम्हें खोजेगा तो कहाँ मिल पाओगे !'

'मेरी खोज छोड़ो रेखा !....लाल को भूल जाओ अब...'

'लोग तो स्वप्न को भी भूल नहीं पाते लाल भैया ! फिर मैं तो जागृत अवस्था में तुम्हारे साथ रही हूँ, तुम्हें मैंने चैतन्य आँखों से देखा है, तुम्हारी आवाज सुनी है, तुम्हारे गले से लगी हूँ, तुम्हें

परेशान किया है....इसे भूल जाना मेरे बस की बात नहीं...'

'भूलने की कोशिश करना रेखा !'

'लाल भैया !....' रेखा के नेत्र गीले हो रहे थे—'तुम्हें पाने की कोशिश की मगर न पा सकी...अब अपने प्रयत्नों पर मुझे विश्वास नहीं रहा....तुम्हें नहीं भूल पाऊँगी लाल भैया !'

'मेरी बात तुम जानती हो रेखा !....' लाल उसका सर सहलाता हुआ बोला—'लाल कहीं भी रहेगा, उसका दिल रेखा के ही पास बसेगा...कहीं भी रहूँ, हमेशा तुम्हें अपने पास देखूँगा....'

'तुम ऊँचे उठ चुके हो लाल भैया ! तुम रेखा को दूर से भी देख सकते हो, दिल की आँखों से....मगर रेखा तो जमीन पर पड़ी हुई एक क्षीण-असहाय रेखा है...वह तुम्हें अपने सामने देखकर ही सन्तोष पा सकती है !'

'मुझे रोको मत रेखा !....तुम रोकोगी तो शायद जा न सकूँगा मैं....'

'तुम जाना चाहोगे तो मैं तुम्हें रोकूँगी भी नहीं लाल भैया !—तुम रेखा के दिल से भी बड़ी समस्याएँ सुलझाने जा रहे हो तो रेखा भी अपनी समस्या किसी न किसी तरह सुलझा ही लेगी...जाओ तुम....रेखा को तुम भूल सकते हो मगर भूलना नहीं, यही रेखा की अन्तिम साध है...'

लाल ने रेखा की आँखें पोंछी।

रेखा ने उसके पैर छुए, हसरत भरी नजरों से उसके चेहरे की ओर देखा फिर पलट कर बाहर हो गई। लाल ने अपनी आँखें उस ओर से घुमा ली।

थोड़ी देर तक वह सफेद छत की ओर सूनी दृष्टि से देखता रहा, फिर एक कुर्सी पर आकर बैठ गया। अपने-आप ही बड़बड़ाया—'रेखा ! काश, तुम अपने लाल की विवशता समझ पाती !'

लाल जानता है कि सरदार को नारियों पर विश्वास नहीं है और लाल पर उसे शङ्का हो आई है, इसीलिए वह उसे रेखा से दूर रखना चाहता है।

लाल के हृदय में कर्तव्य और प्रेम का द्वन्द्व उठ खड़ा हुआ।

रेखा के प्रेम से यदि वह दूर हो जाता है तो अपने कर्तव्य का पालन उससे नहीं हो सकेगा और यदि वह रेखा के लिए रुक जाता है तो सरदार उसे कर्तव्यच्युत की उपाधि दे देंगे। क्या करे लाल? उसका हृदय रेखा का है परन्तु शरीर देश का। वह हृदय से प्रेम कर सकता है और शरीर से कर्तव्य का पालन। कर्तव्य का पालन उसे पहले करना है और अपने हृदय की पीड़ा उसे बाद में देखनी है।

'लाल!' किसी ने पुकारा। लाल ने सर उठाकर देखा, मि० शर्मा खड़े थे अपनी पूरी वर्दी में।

'आइए बाबूजी!....' लाल ने कहा।

लाल का माथा ठनका।

क्या वह पीली फाइल सरकार के हाथ में पड़ गई?

तभी तो मि० शर्मा पूरी वर्दी में उसके पास आये हैं! इसके पहले वे कभी उसके यहाँ नहीं आये थे। शायद उसे गिरफ्तार करने आये हों। उनके साथ बाहर पुलिस जरूर होगी।

'कहीं जा रहे हो क्या लाल?....अभी मैं एक काम से जाने को तैयार था, तब तक आँखों में आँसू लिए रेखा पहुँच गई, उसी ने मुझे बताया....'

'अपने गाँव जा रहा हूँ बाबूजी!....' लाल ने कहा—'माताजी की तबीयत इधर ठीक नहीं रहती! अभी कुछ दिन पहले गया था, बहुत रोने लगी थीं....अब मुझे वहीं रहना पड़ेगा....'

'तुम अपनी माताजी को भी यहीं लाकर रखो बेटा! हमारा इतना बड़ा घर तो पड़ा है....'

'माताजी पुराने विचारों की हैं....' लाल बोला—'सोचती हैं, शहरमें आकर उनका धर्म नष्ट हो जायगा....'

'यह बात है....' मि० शर्मा हँसे—'अच्छा तो गाँव जाकर हमें भूल न जाना....रेखा को कभी-कभी पत्र लिख दिया करना.... मैं चलता हूँ अब....कोई तकलीफ़ यहाँ हुई हो बेटा तो ख्याल न करना....'

मि० शर्मा चले गये।

सब सामान ठीक करके लाल ने हाथ-मुँह धोया और कुर्सी पर आ बैठा, तभी बाहर से पुकार आई—'मि० लालचन्द...'

'कौन हैं, अन्दर आइये !'

आगन्तुक को देखकर हँस पड़ा लाल। वे मि० बिलफोर्ड थे अपनी पूर्व परिचित पोशाक में।

'आइये, मि० बिलफोर्ड ! मिजाज अच्छा तो है !...' लाल ने हँसकर कहा।

'थैंक यू !....' बिलफोर्ड ने कहा और एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाता हुआ कुर्सी पर बैठ गया।

'मैं एकदम तैयार हूँ सरदार !'

'मगर अब इसकी जरूरत नहीं...तुम्हारे लिए अभी मैं कोई अच्छा स्थान निश्चित नहीं कर पाया हूँ....अभी कुछ दिनों तक तुम्हें यहीं रहना पड़ेगा....'

'मगर सरदार, मैं रेखा और मि० शर्मा आदि से विदा ले चुका हूँ....'

'तब तो और अच्छा है....यहीं दो-चार दिन तक पैक रहना फिर जाकर मिल आना....' कहकर बिलफोर्ड रूपी सरदार हँस पड़ा।

'तो मैं अपना सब सामान खोल दूँ !....' पूछा लाल ने।

'जरूर, अपने सर की यह पट्टी भी....जख्म तो अब भर ही चुका होगा, यहाँ का रहना सुनकर....'

'आपको मुझ पर शङ्का है सरदार !....'

'शङ्का थी मगर अब मिट गई....इसीलिए तुम्हें यहाँ रहने दे रहा हूँ। मि० शर्मा का पड़ोसी बनने से तुम बहुत सुरक्षित हो.... बड़ी कोशिश के बाद मुझे वह पीली फाइल मिल गई, बड़ी परेशानी उठानी पड़ी उसके लिए....'

'फाइल मिल गई ? कहाँ कैसे ? कौन ले गया था उसे ?...' लाल आश्चर्यचकित था और उत्सुक भी, यह सुनने के लिए कि उसका प्रतिद्वन्द्वी कौन है ?

मगर सरदार ने कहा—'बस लाल, इसके आगे नहीं। जिसने वह फाइल गायब की थी, वह इस समय मेरे पंजे में है। कभी जान जाओगे। अभी तो मुझे उसे दण्ड देना है....'

'क्या जज की हत्या भी उसी ने की थी ?'

'हाँ !....बड़ा चतुर, बड़ा चालबाज है वह। बस इसके आगे नहीं...मुझे बहुत काम करने हैं...'

बिलफोर्ड उठा और चला गया।

• •

रेखा का मुख उजड़ा-सा लगता है, वीरान ! सौन्दर्य फीका पड़ गया है, आँखें पीली-पीली हो रही हैं। उसने चाय पी है, खाना भी खाया है, हँसने की कोशिश भी की है मगर उसकी हर हरकत के पीछे जैसे आँसू ऊपर उठ आना चाहते हैं। लाल चला गया होगा अब तक, यही उसका ख्याल है और जाने वाले को जाते समय वह अपनी भरी-भरी आँखें नहीं दिखाना चाहती थी, इसलिए लाल के घर की ओर देखा भी नहीं उसने।

दोपहर को उसने अपनी छोटी-सी साइकिल निकाली।

रेखा अपना दिल बहलाना चाहती थी। कहीं भी साइकिल चल पड़े, उसे गम नहीं। थोड़ी देर में वह घूम-फिर कर आ जायगी।

'कहाँ चल पड़ी रेखा ?' दाई ने पूछा।

'घूमने...'

'साइकिल पर !'

'हाँ !' रेखा सायकिल लेकर जाने लगी।

'देखो, ठीक से चलाना साइकिल....' दाई ने हिदायत दी—'हाथ-पैर तुड़ाकर मत लौटना....'

'अब तो हाथ-पैर जरूर टूटेंगे....तुमने कह दिया है न...झूठ कैसे होगा...जब कहीं बाहर जाने लगती हूँ तो इसकी जबान चल पड़ती है....'

रेखा ने पैडिल पर पाँव रखकर सायकिल की सवारी कस ली। साइकिल उसे ले उड़ी। बाजार में पहुँच गई रेखा। भीड़ अधिक थी परन्तु वह कच्ची सवारी नहीं करती थी।

मुख्य बाजार छोड़कर वह एक पतली गली में घुस पड़ी। कहाँ जा रही है वह, कुछ पता न था उसे।

तभी चौदह-पन्द्रह साल की एक लड़की तेजी से दौड़ती आकर रेखा की साइकिल से टकरा गई। दोष रेखा का न था फिर भी वह लड़की तो गिरी ही, रेखा भी साइकिल लिये-दिये गिर पड़ी। वह गरीब लड़की फटे-पुराने कपड़ों में लिपटी उठकर काँप रही थी। भिखमंगी लड़की को देखकर रेखा को और क्रोध आ गया।

लपक कर उसने कई चाँटे जड़ दिये उस गरीब के मुख पर और पीठ पर दो-चार घूँसे भी। लड़की रोने लगी।

रेखा बिगड़कर बोली—'सूअर कहीं की !...मुझे गिरा भी दिया, अब रोती भी है....'

'मैंने जान-बूझकर तो नहीं गिराया आपको....मेरे पीछे दो-तीन लुच्चे पड़ गये थे...भागने की धुन में मैंने देखा नहीं....' लड़की ने रोते-रोते कहा।

'लुच्चे !....तेरे पीछे पड़े थे ?'

'हाँ !....'

'क्यों ?...' रेखा को उस समवयस्क लड़की पर दया आई और अपने आवेश पर लज्जा भी।

'मेरा शरीर लेना चाहते थे....' बोली लड़की।

'तू है कौन ? क्या करती है ?'

'गाँव की एक गरीब लड़की...किस्मत के फेर में पड़कर शहर में आ भीख माँग रही हूँ बहन ! मगर भीख भी कोई बेदाम नहीं देना चाहता मुझे।'

'तेरे माता-पिता कोई हैं ?'

'कोई नहीं....घर-बार भी नहीं रहा....अकेली बच रही हूँ.... शरीर देना चाहूँ तो शरण मिल जाय मगर दिल से मजबूर हूँ....'

'इस उम्र में सभी का दिल मजबूर रहता है...' रेखा कुछ हँसी—'तेरा दिल क्यों कर मजबूर हुआ, बतायेगी मुझे ?....'

'एक परदेसी ने लूट लिया बहन और खुद चलता बना....'

'तेरा नाम ?'

'नयना !'

'नाम तो बड़ा अच्छा है, सूरत भी अच्छी है, मगर कपड़े... नयना तू मेरे यहाँ चलेगी ?....'

'तुम मुझे रखोगी अपने यहाँ....' नयना ने कहा—'अभी सायकिल से टक्कर दे दी कि मेरा घुटना ही फूट गया....'

'घुटना ?....देखूँ तो....'

नयना ने अपना लहँगा उठाकर खून से भरभराया दाहिना घुटना दिखलाया। रेखा बोली—'तुझे तो चोट लग गई है...

अब तक तू चुप क्यों थी रे उल्लू ! घाव सेप्टिक हो जायगा तो पैर ही काट देना पड़ेगा....'

'ऐसी-ऐसी चोटें तो हम गाँव वाले हँसकर अच्छी कर लेते हैं बहन !'

'और दिल की चोट जब तुम गाँव वालों से सँभाले नहीं सँभलती तो परदेसी की खोज में शहर आकर भीख माँगना शुरू कर देती हो, है न ?....' कहकर रेखा हँसने लगी।

'दिल की चोट दूसरी बात है जी !....' नयना ने अजीब अन्दाज से मुस्कराकर कहा।

रेखा को वह अकृत्रिम मुस्कराहट बड़ी ही भली लगी, जिसकी समानता शहर में खोज पाना दुर्लभ था।

'चल, आ पीछे बैठ जा....' बोली वह नयना से।

'हटो जी, मैं इस मशीन पर कभी बैठी नहीं....' नयना ने भोलेपन से कहा—'कहीं गिरा दो तो दूसरा घुटना भी मेरा फूट जाय....'

'फूटने दे न...हँस-हँसकर उसे भी अच्छी कर लेना....आ, अब देर न कर....बैठ जा....'

'तुम्हीं बिठा लो बहन ! मुझे बैठना नहीं आता...' नयना ने कहा।

'अच्छा आ।' रेखा ने नयना को बगल में दबाकर कैरियर पर बिठा दिया। फिर स्वयं सीट पर बैठकर सायकिल चलाने लगी।

'तुम्हारा शरीर तो बड़ा कोमल है जी !....' नयना ने कहा—'फिर यह मशीन तुम कैसे चला लेती हो ?....इसे तो मर्द ही चलाया करते हैं...'

'आजकल की लड़कियाँ मर्द से कम थोड़े ही हैं....'

'तो क्या तुम लोग मर्द का सारा काम स्वयं कर लेती हो।'

'चुप, शैतान कहीं की !....हिल मत नहीं तो गिर जायगी...'

'नहीं....ठीक से तो बैठी हूँ जी....मगर इतनी ही देर में बदन

अकड़ गया... तुम्हारा अकड़ा कि नहीं ?....तुम तो और भी अधिक मिहनत कर रही हो....'

'तेरी तरह लजारो-लता नहीं हूँ मैं कि इतनी जल्दी पस्त हो जाऊँ....'

'रहने दो जी !...एक दिन खेत में काम करना पड़े तो नाक का पसीना आँख से बोल दे....'

तब तक रेखा का घर आ गया था। रेखा उतर पड़ी और नयना को भी उतारा उसने। बोली—'देख नयना !....मैं यहीं रुक जाती हूँ। तू निडर होकर भीतर घुस जा....दाई को खूब छकाऊँगी...तुझे बिगड़े तो ख्याल मत करना। कह देना मैं रेखा की सहेली हूँ....तब तक मैं पहुँच जाऊँगी...डरेगी तो नहीं ?...'

'नहीं जी ! मैं क्यों डरूँगी ? दाई बूढ़ी ही तो होगी, दाँत तो होंगे नहीं कि काट खायेगी....' कहकर नयना घर के अन्दर प्रविष्ट हुई।

सामने से ही दाई कोई सामान लिए चली आ रही थी। नयना के भिखारी भेष पर उसकी दृष्टि गई तो आग की तरह जल उठी—'कहाँ घुसी आ रही है रे ?'

'यहीं तो...' नयना ने निडर भाव से कहा।

'तेरे बाप का घर है क्या ?.....'

'नहीं जी, रेखा के बाप का है न ? वह तो मेरी सहेली है !'

'चल हट सहेली की बच्ची !...' बुढ़िया बिगड़ी—'अभी निकल, नहीं तो ठीक कर दूँगी....,

'अजी रहने भी दो, किसी दूसरे वक्त ठीक कर लेना.... मेहमान पर इतना बिगड़ती क्यों हो ?'

'देख लड़की, भीख माँगना हो तो बाहर से आवाज दे.... चोरी करने का इरादा हो तो बोल जल्दी....सीधे मानेगी या नहीं ?...'

'मान जाऊँगी दाई !....रेखा नहीं है क्या ?'

'रेखा सोई है....इस वक्त कुछ नहीं देगी....जा भाग !'

'भागती हूँ, घबड़ाई क्यों जाती हो ?....इतनी दूर गाँव से चलकर आई और तुम दुत्कार रही हो...लो चली जाती हूँ।'

'गाँव से !....गाँव से आई है तू !....' बूढ़ी भी गाँव की ही थी और हमेशा अपने गाँव की याद किया करती थी—'किस गाँव से आई है तू ?....'

'क्या नाम...क्या कहते हैं....'

'हरिपालपुर से तो नहीं...' हरिपालपुर बूढ़ी के गाँव का नाम था।

'हाँ-हाँ—वहीं से आ रही हूँ....'

'किसकी लड़की है ?....'

'क्या कहते हैं....क्या नाम....'

'शिवराम की लड़की है क्या तू....वह तो मर गया...उसकी बहू भी बड़ी लक्ष्मी थी।'

'हाँ....हाँ, मैं शिवराम की लड़की हूँ दाई....'

'अरे मुई, तूने अब तक बताया क्यों नहीं....मेरा भाई लगता था शिवराम....बेचारा मर गया। बहुत दिन हुए सुना था, तू अभी तक बची ही है ?...रेखा को तू कैसे जानती है....'

'गाँव पर ही सुना था कि तुम रेखा के यहाँ काम करती हो....पता लगाते-लगाते थक गई दाई !....तुमको पहचानती भी तो नहीं थी....'

'अच्छा चल बैठ ! रेखा आये तो कह देना, बुआ के पास आई हूँ....कुछ बिगड़े तो बुरा न मानना....बड़ी शैतान लड़की है...'

'अच्छा बुआ ! तुम कहोगी तो मैं उसे ठीक कर दूँगी कभी!'

'चुप रे लड़की ! रेखा सुन ले तो लगे उछलने-कूदने।'

रेखा बाहर खड़ी हुई सुन रही थी। उसे सन्तोष हुआ कि नयना ने बातचीत के सिलसिले में दाई से अपनी रिश्तेदारी कायम कर ली है और उसे कोई कैफियत देने की अब जरूरत नहीं।

तभी उसकी दृष्टि लाल के घर की ओर अनायास ही जा पड़ी। कमरे में रोशनी हो रही थी। लाल भैया अभी तक गये नहीं था उनके घर में कोई दूसरा आ बसा? घर तो उसी का है। उसके पिता ने किसी नए किरायेदार के आने की बात भी तो नहीं बताई। रेखा अपनी सायकिल लिए-दिए लाल के दरवाजे पर आ गई। उसने घण्टी दो-तीन बार जोर से बजाई।

'कौन है....' स्वर लाल का ही था। रेखा ने सायकिल बेतहाशा पटक दी और दौड़कर लाल के कमरे में घुस गई। लाल कुर्सी पर बैठकर कोई पुस्तक पढ़ रहा था—

'लाल भैया!'

'आओ रेखा!....' लाल ने कहा।

रेखा बैठ गई, बोली—'तुम गये नहीं अभी?'

'जाने का इरादा बदल दिया रेखा!'

'अब नहीं जाओगे कभी?'

'कभी की बात छोड़ो, फिलहाल तो नहीं जा रहा हूँ...' लाल ने कहा।

'तुम बड़े बुरे हो लाल भैया....' बोली रेखा—'मुझे खबर तक न दी। मैंने दिन भर कुछ खाया नहीं....मन मारे बैठी रही....'

'रहने दे झूठी कहीं की!' लाल ने कहा—'अभी दाई से पूछ कर आ रहा हूँ। तूने चाय पी, खाना भी खाया, हँसी-कूदी भी और सायकिल लेकर घूमने भी गई थी...क्या मुझे मालूम नहीं?...'

'पत्थर मालूम है तुम्हें लाल भैया! तुम्हारे लिए कितनी बार

रोई, इसे न तो दाई ही जान सकी और न तुम्हीं....गये क्यों नहीं तुम ?'

'मेरी इच्छा! मेरा यहाँ रह जाना तुझे बुरा लगा क्या ?...'

'नहीं तो! मगर तुम मेरे लिए तो रुके नहीं होगे लाल भैया ?...जरूर उस भिखारी ने तुम्हें रोका होगा....नहीं तो उसे भीख कौन देता ?....'

'कहाँ गई थी सायकिल पर ?'

'शिकार करने....' रेखा ने हँसकर कहा।

'शहर में शिकार खेलती है तू....और सायकिल पर ?'

'सायकिल इतनी बुरी तो नहीं लाल भैया! सवारी का भी काम दे और शिकार को घायल करने के लिए हथियार का भी....'

'वाह, क्या कहने हैं! किसका शिकार तू कर लाई रेखा!'

'एक देहाती लड़की ही तो है, मेरे इतनी...चञ्चल! शोख!... मेरे सामने आ पड़ी तो मैंने उसका ही शिकार कर डाला। बेचारी का घुटना फूट गया....अभी ही तो लौटी आ रही हूँ उसे लेकर....'

'उसे भी लाई है अपने साथ ?'

'तब क्या!'

'कहाँ रखेगी उसे ?'

'अपने साथ.... अपनी सहेली बनाकर....'

'दाई तो तेरी जान खा डालेगी रेखा! उसे कौन समझायेगा!'

'यह मंजिल भी तय हो चुकी लाल भैया!....' रेखा ने कहा—'घर आकर मैंने पहले उसे ही अन्दर भेज दिया....शैतान इतनी कि अन्दर जाकर दाई की बुआ बन बैठी...'

'दाई की बुआ!'

'अरे नहीं, दाई की भतीजी, समझे....दाई ने उसे खुद ही रख लिया....पिताजी भी जब सुनेंगे कि दाई की भतीजी है तो बड़े खुश

होंगे...मैं तो अभी बाहर से ही तुम्हारे पास चली आई हूँ....'

'अभी तक तो एक तू ही थी मेरा सर खाने को, अब एक तेरी सहेली भी आ गई....

'वह तो मुझसे भी अधिक चञ्चल है लाल भैया !...तुम्हारा सर पूरा खा डालेगी....कल लाऊँगी उसे तुम्हारे पास !'

'रेखा ! बड़ी अच्छी टाफी लाया हूँ....खायेगी एक !'

'एक नहीं, दो खाऊँगी लाल भैया ! डाल दो मुँह में....' रेखा ने अपना मुँह खोल दिया।

लाल ने जेब से टाफी निकाल कर रेखा का मुँह भर दिया। बाहर आकर रेखा ने अपनी साइकिल उठाई और घर आ गई।

'दाई !....' रेखा आ गई—'यह लड़की कौन है ?'

नयना इस तरह सिटपिटा गई, जैसे रेखा को उसने कभी देखा ही न हो। दाई बोली—'यह लड़की....यह लड़की... मैं इसकी बुआ हूँ रेखा ! अभी थोड़ी देर हुई, गाँव पर से आई है...'

'यहाँ क्यों आई है दाई ?'

'भेंट करने बेटी ! छोटी-सी थी तभी इसे देखा था....बेचारी के माँ-बाप सभी मर गये हैं....तुम चलो कपड़े बदल लो !....'

'चलती हूँ दाई ! मगर यह लड़की यहाँ से जायगी कब ?'

'यह तो अब हमारे ही पास रहेगी रेखा ! बूढ़ी हो गई हूँ, तेरी देख-भाल ठीक से नहीं कर पाती। यह रहेगी तो अच्छा रहेगा....'

'इससे कह दो, ठीक से रहेगी, नहीं तो ठीक नहीं होगा !....' कहती हुई रेखा अपने कमरे में चली गई।

वहीं से पुकारा उसने—'दाई ! उसे यहाँ भेज दो, कपड़े दे दूँ !...'

दाई और नयना दोनों आईं। रेखा ने अपने कुछ कपड़े उसे दे दिए—'ले, इन्हें अभी पहन ले...'

दाई खुश हो गई रेखा की सहृदयता पर। नयना ने स्नान

करके कपड़े बदले। नये कपड़ों में वह काफी सुन्दर दीखने लगी। दाई चली गई तो नयना ने रेखा की ओर देखकर हँस दिया।

बोली रेखा—'बड़ी चालबाज है तू! बूढ़ी दाई को फाँस ही लिया....'

'मेरी बुआ को कुछ मत कहना जी!...' नयना ने मधुर हँसी हँसकर कहा—'कितनी अच्छी हैं बुआ....'

'बुआ की बच्ची! मैं आज बहुत खुश हूँ....लाल भैया नहीं गये....मुझे छोड़कर चले जाने वाले थे....'

'क्यों?...कहाँ!...' नयना ने पूछा। वह जानती भी नहीं थी कि यह लाल कौन है?

'बड़े विचित्र आदमी हैं नयना!....' बोली रेखा—'मेरे लाल भैया अच्छे तो हैं मगर उनके दिल पर किसी का मोह असर ही नहीं करता....चिकने घड़े पर कितना ही आँखों का पानी डालो, वह फिसलता चला जाता है...वह क्या न उस बगल वाले मकान में रहते हैं...मुझे बहुत चाहते हैं....'

'थोड़ा बहुत कम ही चाहते होंगे रेखा, नहीं तो तुम्हें छोड़कर कभी नहीं जाते....'

'वह जा ही कहाँ सके!....सब सामान ठीक करके भी रुकना पड़ा उन्हें....'

'मुझे भी अपने लाल को दिखाओ कभी!....'

'कल ही ले चलूँगी तुझे उनके पास....देख लेना कितने अच्छे है!....' बोली रेखा।

रात में मि० शर्मा लौटे, थके-माँदे।

रेखा और वे साथ खाने बैठे, नयना खाना लाई।

'आज दाई कहाँ गई रेखा!....' मि० शर्मा ने पूछा—'फिर बीमार पड़ी क्या? और यह लड़की कौन है?'

'यह दाई की भतीजी है ! अभी आज ही उसके गाँव से आई है...' रेखा ने कहा।

'अच्छा !...तब तो इसे भी यहीं रोक ले रेखा ! दाई की मदद कर दिया करेगी....लड़की भी अच्छी मालूम पड़ती है....'

नयना खड़ी थी मि० शर्मा की ओर देखते हुए। उसे वे बड़े दयालु लगे। तब तक दाई भी आ गई—'अरे मुई ! बाबूजी के पैर तो छू....'

नयना ने मि० शर्मा के पैर छुए। उन्होंने आशीर्वाद दिया।

'यह तुम्हारी भतीजी है दाई !'

'हाँ !...अब तो आपकी शरण में आ गई है बेचारी !' दाई ने कहा।

'इसे अपनी शरण में रख लो दाई !....मेरी शरण में रहेगी तो रात-दिन जासूसी करते परेशान हो जायगी....' कहकर मि० शर्मा हँसने लगे—'अब रेखा ही इसे शरण देगी !'

'मैंने तो इसे अपनी सहेली बना लिया है पिताजी !'

'चलो, तब तो एक की जगह दो बेटियाँ हो गईं....अच्छा ही हुआ....'

'अब एक बेटा भी खोज लें पिताजी !' इस बार नयना बोली।

'लाल तो है ही....' मि० शर्मा बोले तो रेखा गम्भीर हो गई।

'इसका क्या नाम है दाई !' मि० शर्मा ने पूछा।

'बचपन में तो हम लोग बचिया ही कहते थे—यह कहती है नयना नाम अच्छा रहेगा !....' दाई ने कहा।

'ठीक है....' मि० शर्मा बोले—'नयना बेटी ! तू भी आ.... साथ ही खा ले....'

'इसे अभी से सर पर न चढ़ायें...गरीब की लड़की प्यार पाकर बिगड़ जायगी !'

'इसे गरीब की लड़की मत कहो दाई, यह तो मेरी लड़की

है....रेखा की बहन ! क्यों रेखा, यह लड़की पसन्द तो है तुझे ?'

'बहुत पिताजी !....नयना बातचीत बहुत अच्छे ढङ्ग से करती है....' रेखा ने कहा।

सभी लोग खाने लगे, दाई परोसने लगी !

● ●

'देख यही लाल भैया का घर है....'

दूसरे दिन नयना के साथ रेखा खड़ी थी लाल के दरवाजे पर।

'यही घर है ?....इतना छोटा-सा...तुम्हारे लाल भैया अकेले हैं क्या ?....बाल-बच्चे कुछ तो दिखाई नहीं पड़ते....'

'लाल भैया तो अभी खुद बच्चे हैं....' बोली रेखा, फिर पुकारा—'लाल भैया !....ओ लाल भैया !...आऊँ अन्दर ?'

'आती क्यों नहीं...' भीतर से लाल ने जोर से कहा—'या बाहर से ही बाँग देती रहेगी ?....'

'देखा !' रेखा बोली—'अभी बाहर ही हूँ कि लगे काट खाने, पहरा दिलाना हो तो लाल भैया को पाल ले....है न नयना !...'

नयना कुछ बोली नहीं। उसने अन्दर से आई लाल की आवाज सुनी थी और उसके कान सतर्क हो गये थे। यह चिर-परिचित स्वर रेखा के लाल भैया का है या नयना के कान के परदों का सन्देह ?

'आ नयना भीतर चलें....' रेखा ने नयना का हाथ पकड़ लिया और लाल के कमरे में आ रही।

लाल मेज पर बैठा कुछ लिख रहा था। रेखा को आया जानकर भी उसने सर नहीं उठाया। लिखता ही रहा। नयना मेज की बगल में आ गई। उसकी दृष्टि लाल के चेहरे पर पड़ी।

'उधर कुर्सी पर बैठ जाओ....' लिखते-लिखते ही लाल ने कहा।

नयना एकटक लाल का चेहरा देखने लगी थी। उसके दिल की धड़कन तेज हो गई। उसका बाबू, उसका परदेसी उसके सामने ही तो था!

'लाल भैया, देखो न, यह कौन आया है....' बोली रेखा।

'सीधे बैठ जा रेखा! मैं अभी पाँच मिनट में खाली हुआ जाता हूँ....'

मगर रेखा ने लाल को उस समय लिखने नहीं दिया और फाउण्टेनपेन छीन ली।

'शैतान कहीं की!'

रेखा हँस रही थी, नयना सागर-सी गम्भीर थी। लाल के नेत्र नयना के नेत्रों से मिले। चौंक पड़ा लाल, मगर उसने अपने को सँभाला। नयना तो बहुत पहले से ही सँभल चुकी थी। वह निश्चल खड़ी रही। भरभराई हुई आँखों को उसने दूसरी ओर कर लिया।

'यह कौन है रेखा!'

'वही लड़की....कल बता चुकी थी न....'

'ओह!....' लाल ने कहा—'तू तो कहती थी कि यह बड़ी चंचल है—पत्थर को भी क्या चंचल कह सकते हैं रेखा!'

'बड़ी चंचल थी लाल भैया! सच कहती हूँ...तुम्हें देखकर न जाने क्यों गुम-सुम हो गई है....बैठ नयना! इस कुर्सी पर बैठ जा। लाल भैया से शरमाती है क्या?...'

'नहीं जीजी!....' कहकर नयना कुर्सी पर बैठ गई।

रेखा उछलकर लाल की कुर्सी के आर्म पर आ बैठी और उसके गले में हाथ डालकर बोली—'कैसी लड़की है लाल भैया!....'

'अच्छी नहीं है रेखा....' लाल ने कहा।

'तुम्हीं अच्छे नहीं होंगे !....' रेखा ने बात उलट दी।

नयना ने एक बार लाल की ओर देखा फिर रेखा की ओर और फिर लाल के गले में माला बनी हुई उसकी सुकुमार बाँहों की ओर—उसका परदेसी आज दूसरे का था। उसकी निधि लुटेरा लूट रहा था। नयना तड़प उठी, गाँव की भोली लड़की लाल और रेखा को क्या जाने, क्या समझे ?

'नयना ! तू भी कुछ बोल !'

'क्या बोलूँ !...' नयना ने अपना स्वर सँभाल कर कहा।

'मेरे लाल भैया कैसे हैं....'

'बहुत अच्छे...बहुत-बहुत...'

'तेरे परदेसी से थोड़ा कम ही होंगे नयना !....' रेखा ने व्यङ्ग किया।

'धत्....' नयना चुप हो रही।

'लाल भैया ! इस लड़की को मासूम मत समझना....' बोली रेखा—'बेचारी एक परदेसी को अपना दिल दिये बैठी है, उसी की खोज में आई थी शहर....'

लाल कुछ बोल न सका। वह अजीब पशोपेश में पड़ गया था।

'रेखा जीजी !...ऐसी बातें मत किया करो....मैं चली जाऊँगी....' नयना ने कहा।

'लाल भैया से तू अपने परदेसी की हुलिया बता दे, कभी खोजकर ला देंगे नयना !'

'रेखा तू बड़ी जिद्दी लड़की है....बेचारी को नाहक तकलीफ दे रही है....' लाल ने कहा।

'मैं तो परेशान हूँ लाल भैया !....अभी यहाँ आने से पहले यह तुम्हें देखने को बड़ी उत्सुक थी....तुम्हें देखकर अब यह गम्भीर हो रही है...'

'मैं देख चुकी रेखा जीजी! अब जाती हूँ....तुम आना!' कहकर नयना उठ खड़ी हुई और बिना रुके चली गई।

'अजीब लड़की है....' रेखा ने कहा।

'हूँ!....' लाल केवल इतना ही बोला।

'तुम्हें भी कुछ हो गया है क्या लाल भैया?'

'नहीं तो!....'

'तुम भी बड़े गम्भीर हो चले हो....क्या बात है....'

'कुछ नहीं रेखा!....इस लड़की का नाम क्या है?'

'नयना!...नाम क्यों पूछ रहे हो तुम?'

'मूर्ख नहीं तो!....' लाल बिगड़ पड़ा—'नाम भी पूछना कोई अपराध है क्या?....'

'अपराध तो नहीं है लाल भैया!....मगर उसके सामने तुमने नाम क्यों नहीं पूछा? शर्म तो आती नहीं होगी तुम्हें, पुरुष जो ठहरे...'

'लड़की बड़ी अच्छी है रेखा!'

'सुन्दर कहो लाल भैया! दिल की बात टेढ़े-मेढ़े से जबान पर मत लाओ...उसे भी तुम कम अच्छे नहीं लगे हो...तभी तो इतनी जल्दी उठकर भाग गई।'

'एक बात तुझसे कहनी थी रेखा! मगर अभी नहीं कहूँगा....'

'तुम्हारी बातों का कुछ ठिकाना भी है लाल भैया!....इधर भिखारी बाबा नहीं आये कभी?'

'तूने भीख काफी दे दी थी न! जब सब खतम हो जायगा तब आयेंगे....'

'मगर उन्हें अपने मस्तक के खुजली की दवा लेने तो आना ही था तुम्हारे पास....लाल भैया, वह शीशा....तुम्हारा वह बड़ा-सा आईना क्या हुआ?...'

'उसे हटा दिया...'

'क्यों हटा दिया !....मेरे डर से न ? मैं तो केवल एक दिन ही उसके पास गई थी....तुम नाराज हो गये लाल भैया ?'

'नहीं...'

'तो शीशा क्यों हटाया !....उसके पीछे की आलमारी.... रिवाल्वर... डायरी....'

'सब गायब ! तू आज पूछ कर ही रहेगी....मानेगी नहीं ?.... उस दिन मेरे कमरे से एक चोर कुछ कागजात उठा ले गया था....'

'शायद मजाक करता रहा होगा....'

'मजाक समझती है तू ? मेरे सर में उसने घाव कर दिया था रिवाल्वर की मूठ से....' बोल लाल।

'तो यों कहो न कि उस दिन ठोकर की चोट नहीं लगी थी, लगाई गई थी....तभी तो मैं हैरान थी कि ठोकर पैर में लगती है और लाल भैया सर के बल तो चलते नहीं कि माथा चुटीला हो जाय....इतना झूठ क्यों बोल गये थे उस दिन लाल भैया ?'

अब लाल को अपनी भूल मालूम पड़ी।

रेखा से वह कब तक इस तरह हारता रहेगा ? इस जरा-सी लड़की को सारी बातें पाठ की तरह याद रहती हैं। एक बार लाल से वह जो सुन लेगी, भूल नहीं सकती कभी।

'तुम्हारे सर की चोट कैसी है अब लाल भैया !'

'अच्छी है....' बोला लाल।

'दुखती नहीं कभी ?'

'नहीं....'

'बड़े सङ्गदिल हो लाल भैया तुम !...चोट खाकर भी पीड़ा नहीं होती तुम्हें....और मैं बिना चोट खाये ही पीड़ित हो जाती हूँ....'

'कैसे ?'

'तुम्हारे माथे पर चोट लगी और अच्छी भी हो गई...उस दिन तुम्हारी गोली मुझे लगी भी नहीं और पीड़ा मुझे आज तक है... यही अन्तर है लाल भैया!...'

'कैसा अन्तर ?....'

'नारी और पुरुष में...अवलम्ब और अवलम्बित में....लाल और रेखा में....'

'लाल क्या है और रेखा क्या है ?'

'लाल है आसमान पर चमकता हुआ चाँद और रेखा है चाँद की रोशनी से चमकती हुई जमीन पर शीशे की एक पतली लकीर...समझ गये ?' बोली रेखा।

'नहीं, रेखा है जीवन की प्रेरणा और लाल है जीवन की गति...प्रेरणा के बिना गति का कोई महत्व नहीं रेखा !....'

'यह तो तुम्हारी अपनी व्याख्या हुई लाल भैया....हर कोई अपनी अलग-अलग राय रख सकता है...रखता ही है।'

'मैं बहुत जरूरी बात लिख रहा था, तूने आकर विघ्न डाल दिया।'

लाल भैया! थोड़ी देर के लिए मैं कभी-कभी आती हूँ तो तुम्हारे लिए वजनी हो जाती हूँ....'

'वजनी तो तू यों भी कम नहीं है....'

'होंगे तुम्हीं! मुझे क्या कहते हो!...लो मैं जाती हूँ... भिखारी आवे तो मेरा राम-राम कह देना...कभी रात में कोई चोर घुसे तुम्हारे घर में तो मुझे पुकार लेना....यों ही चुपचाप अकेले-अकेले मस्तक में चोट मत खाना लाल भैया! मुझे भी तो अपने दुख-दर्द में शामिल कर लो...कर लोगे किसी दिन तो.... रेखा भी अपने को धन्य मानेगी....' कहकर रेखा चल पड़ी।

नयना रेखा के कमरे में आकर पड़ गयी थी पलङ्ग पर। आँखें रो रही थीं। दिल का तूफान वेग पर था। नयना लुट गई थी। उसका परदेसी रेखा का है और रेखा है नयना की संरक्षिका।

नयना का रोम-रोम ऋणी है रेखा का।

रेखा कितनी दयालु है!—रेखा का दिल कितना विशाल है। उसने धूल से सनी नयना को चमकाकर हीरा बनाया है, अपनी बहन बनाया है—तो नयना उसके प्रति इतनी अकृतज्ञ कैसे हो जाय। कैसे वह अपने परदेसी को रेखा से छीन ले!

उसके परदेसी ने भी तो उसे पहचाना नहीं या पहचान कर भी अनपहचान का भाव दिखाया। लाल डाकू है, जिसके पीछे पुलिस ने उसका घर जला दिया, उसके बाप की जान ले ली.... स्वयं वह भी भागी न होती तो न जाने क्या होता।

वह रेखा से कह दे तो उस डाकू की पोल खुल जाय और रेखा भी सावधान हो जाय। नयना लुट चुकी है तो रेखा न लुटने पाये। रेखा ने उपकार जो किया है इतना नयना पर।

मगर रेखा से कैसे कहे वह सब? कैसे कह सकेगी? सुनकर रेखा पर क्या गुजरेगी? नयना ने लिहाफ में मुँह कर लिया और सिसकती रही! वह बेजार थी, बेकरार थी। तभी रेखा आ गई। उसने नयना की हिचकी सुनी तो हैरान होकर रह गई। इतने अगम सुख में इस भिखारिन को कौन-सा दुख आ लगा!

'नयना...' पुकारा उसने—'रो क्यों रही है री!....'

'परदेसी की याद आ गई थी जीजी!....' नयना ने कहा।

'पागल लड़की! परदेसी इतना प्यारा था तो उसे जाने ही क्यों दिया तुमने?....जन्म भर एक पंछी पालो मगर पिंजड़ा खुलते ही गायब। परदेसियों की भी यही हालत है। जिसे पङ्ख होते हैं या जिसके पैरों में गति होती है, वह एक जगह की मोह-माया में नहीं बंधता नयना?—'

'जी कभी-कभी बहुत दुखने लगता है जीजी! बहुत सँभालती हूँ मगर बेसहारे पैर सँभल नहीं पाते—'

'प्रेम के पीछे तू इतनी बेहोश हो उठी है नयना! यह ठीक नहीं—'

प्रेम तो तुम भी करती हो जीजी—अपने लाल भैया से !—क्या तुम्हें प्रेम की पीड़ा नहीं लगती ?—'

'लगती है नयना ! मगर तेरी जैसी पीड़ा मुझे नहीं होती....'

'तब कैसी होती है रेखा जीजी ।'

'शायद समझा न सकूँ मैं—' बोली रेखा—'शायद तू भी समझ न सके....तेरे और मेरे प्रेम में कुछ अन्तर है....तेरा प्रेम अपनी तृप्ति के लिए है और मेरा प्रेम अपने उत्थान के लिए—तू परदेसी से प्रेम करती है उसे पाने के लिए, और मैं लाल भैया को चाहती हूँ उनका पथ अपनाने के लिए, उनके साथ आगे बढ़ने के लिए....तू परदेसी को पा जाय तो तृप्त हो जाय, मैं लाल भैया को पाकर भी अतृप्त ही हूँ....नारी तो हम दोनों ही हैं नयना ? तुम्हें पुरुष के शरीर की चाह है और मुझे पुरुष के गति की, साहचर्य को ! तुम पुरुष को अपने में समा लेना चाहती हो....मैं पुरुष को अपने से आगे रखकर अग्रसर होने की शक्ति लेना चाहती हूँ !'

'तुम बहुत अच्छी बातें बताती हो जीजी ! मैं सीखूँगी तुमसे....'

'नयना....' तभी पुकारती हुई दाई आ पहुँची ।

'क्या है बुआ ?....' नयना बोली ।

'यह देखो बुआ की भतीजी को !....' दाई बोली—'आई थी वहाँ से मेरा हाथ बँटाने....यहाँ आकर तो रेखा की चाची बन गई....'

'माफ करो बुआ !...चलो, मैं चलती हूँ । क्या काम करना है ? बिल्ली को दूध पिलाना है क्या ?'

'लाकर खाना खिला दे अपनी इस बिल्ली को, जिसके साथ दिन भर म्याऊँ-म्याऊँ करती रहती है तू भी !...' दाई ने रेखा की ओर इशारा करके कहा ।

'दाई मुझे बिल्ली बनाओगी तो एक दिन तुम्हारी बिल्ली की गर्दन ही तोड़ दूँगी....'

'मेरी ही गर्दन तोड़ दे किसी दिन....देखूँ यह नयना की पिल्ली कितने दिन पकाकर तुझे खिलाती है....कप्तान की बेटी क्या हुई दिन-रात खून खच्चर !'

'जाने दो बुआ !...' नयना ने कहा—'रेखा जीजी थोड़ी-बहुत खराब हैं....'

'रहने दे, तू ही थोड़ी-बहुत अच्छी है....चल, सीधे से मेरे साथ....'

नयना दाई के पीछे चली गई। दूसरे दिन—नाश्ते के बाद रेखा कपड़े बदलकर साइकिल उठाई और नयना से बोली—'मैं जरा काम से जाती हूँ...दो घण्टे बाद आऊँगी, कुछ देर हो जाय तो घबड़ाना मत... खाना खा लेना....'

रेखा चली गयी। नयना बड़ी देर तक चुपचाप बैठी रही, फिर उसकी तबीयत ऊबने लगी। तभी लाल के घर की ओर उसकी दृष्टि पड़ी। उसका हृदय हाहाकार कर उठा। उफ् !... उस घर में बैठा परदेसी उसका नहीं हो सका, न हो सकेगा कभी। रेखा घर में नहीं है। नयना का परदेसी तो अपने घर में होगा ही।

नयना उठी। दरवाजे की ओर बढ़ी।

'ओ नयना !....कहाँ चल दी बेटी ?'

'जरा लाल के घर जा रही हूँ !....' बोली नयना।

'तुझे भी उस लाल-पीले की हवा लग गयी !...' दाई ने कहा—'कहे देती हूँ...वह अच्छा आदमी नहीं है। रेखा का ही कलेजा है, जो काजल से बचकर निकल आती है....'

नयना लपककर लाल के दरवाजे पर आ खड़ी हुई।

'क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ ?'

'आओ ! ओह नयना तुम ?'

'मेरा नाम याद है तुम्हें लाल बाबू!' नयना गम्भीर गति से भीतर आ गई—'मैंने सोचा, कल तुमने रेखा जीजी के साथ मुझे पहचाना नहीं तो मेरा नाम भी भूल गये होंगे!...'

'तुम्हें मैं भूला नहीं हूँ नयना! तुमने मेरे साथ बहुत उपकार किया था....'

'उपकार की शाबासी देकर तुम मुझे बहला नहीं सकते लाल बाबू!...कुत्ते भी उपकार का बदला पूँछ हिलाकर दे देते हैं, मगर नयना को इन्सान और कुत्ते में बहुत अन्तर दीखता है...

'चाहे तुम जो कहो नयना! मगर लाल के लिए तुमने कम त्याग नहीं किया, इसे तो तुम महसूस करती ही होगी....'

'तुमको तो जान चुकी हूँ लाल बाबू!...और रेखा की बाँह तुम्हारे गले में देखकर रेखा को भी समझ गई हूँ...तुम्हारे लिए मैंने बहुत कुछ किया। तुम इतने ही वफादार होते तो मेरी खोज न लेकर रेखा की बाँहों में बँध कर न रह जाते....'

'कौन कहता है कि मैंने तुम्हारी खोज नहीं की!....' बोला लाल—'टैक्सी लेकर जमनापुर थाने गया, तुम्हें छुड़ाकर ले भी आ रहा था कि तुम बीच से ही गायब हो गईं...'

'तो वह तुम्हीं थे! मैं पुलिस जानकर कूद पड़ी थी रास्ते में.... बताया भी तो नहीं! शायद चुपचाप कहीं ले जाकर फेंक आना चाहते थे, ताकि मैं फिर तुम्हारे रास्ते में न पड़ूँ!...'

'मैंने तुमसे पहले ही कह दिया था नयना कि अगर कभी तुम्हारे लायक बन सका तो पीछे न हटूँगा....'

'कभी बन भी सकोगे मेरे लायक रेखा के रहते, इसका मुझे विश्वास नहीं....'

'न हो विश्वास तुम्हें, इसकी दवा मेरे पास नहीं...' लाल ने ने कहा—'रेखा मेरे निकट जो बन चुकी है, वह कोई नहीं बन सकता...तुम तो अभी उससे बहुत पीछे हो...तुम मुझे पाकर

अपने में खो देना चाहती हो....रेखा मुझे पाकर अपने को प्रज्वलित करना चाहती है। तुम मेरे बिना असहाय हो...और रेखा मेरे बिना भी अग्रसर हो सकती है....इतने महान अन्तर को तुम कैसे समझ सकती हो नयना !....मैं कैसे तुम्हें बताऊँ कि रेखा मानवी नहीं देवी है....'

'लाल बाबू ! मैं तो सिर्फ एक रास्ता जानती हूँ....नारी अगर निराश हो जाती है तो उसका बदला बड़ा भयंकर होता है...'

'बदले का डर तुम मुझे मत दिखाओ नयना !....'

'मैं जानती हूँ कि तुम डरने वाले नहीं...' नयना ने कहा—'मगर हाड़-मांस की बनी हुई तुम्हारी देह पर अगर चोट की जाय तो ऐसा नहीं कि पीड़ा न पहुँचे....रेखा के पिता कप्तान हैं....मेरे मुँह से तुम्हारा परिचय और लखनपुर की घटना सुनकर वे कुछ तो जरूर करेंगे....'

सुनकर लाल चौंक पड़ा।

बोला—'तुम इतना आगे बढ़ सकोगी नयना ?'

'निराश नारी बड़ी बलवान होती है लाल बाबू ! इस चोट के लिए तुम तैयार रहोगे...'

'तो तुम्हारा यह दृढ़ निश्चय है ?...' लाल का स्वर बेहद कठोर हो गया था।

'हाँ !....' नयना भी तनकर बोली।

'तो तुम अभी मरने के लिए तैयार हो जाओ !...' लाल का रिवाल्वर उसके हाथ में तन गया।

नयना डर गई। सहम कर खड़ी हो गई।

बोली—'तुम....तुम मेरा खून करोगे ?'

'तुम्हारे खून से मेरे हाथों में धब्बा नहीं लगेगा....वासना के पीछे बेहोश नारी की कोई कीमत नहीं...प्रेम को ऐसा घृणित रूप देने वाली नारी बेहया है...' लाल गरज कर बोला !

तभी बाहर से रेखा की आवाज आई—'लाल भैया....नयना इधर आई है क्या ?'

लाल ने रिवाल्वर जेब में रख लिया, बोला—'हाँ ! यहीं तो है....आ न रेखा !...'

रेखा आ गई। गौर से दोनों को देखने के बाद नयना से हँसकर बोली—'क्यों रे दुष्ट ! कल लाल भैया से शर्म लगती थी और आज अकेली मिलने चली आई !....'

'रेखा इस लड़की का दिमाग ठीक है न ?...' लाल ने पूछा।

'है तो !....' रेखा ने कहा—'कुछ कह दिया हो तो बुरा न मानना लाल भैया ! गाँव की है न, शहर की सभ्यता क्या जाने ! चल नयना दाई बुला रही है....'

'इसे अभी यहीं रहने दो रेखा !'

'क्यों ?....कुछ बात करनी है क्या लाल भैया ?'

'हाँ...'

'कल कर लेना...' बोली रेखा—'आओ चलो नयना ! लाल भैया से ज्यादा बातें मत करना....ये कभी-कभी काटने भी दौड़ते हैं....'

मगर नयना अतिशय गम्भीर बनी रही। रेखा चली तो वह भी उसके पीछे हो ली।

लाल कुर्सी पर बैठकर सोचता रहा।

नयना कितने नीचे गिर गयी !

कीचड़ में लोटकर वह रेखा के चाँद को पकड़ना चाहती है। उसमें प्रतिशोध की इतनी प्रबल भावना कैसे आ गयी ! यदि वह मि० शर्मा से सब कुछ कह दे तो ! कह दे कि लाल ही जज वाली हत्या की रात उसके घर टिका था, उसी ने जमनापुर थाने से उसे भगाया था....कह दे सब कुछ तो क्या होगा !

'मि॰ लालचन्द !...' बाहर से कोई पुकारता हुआ अन्दर आ गया।

'आइये मि॰ बिलफोर्ड !....' लाल ने सूटेड-बूटेड बिलफोर्ड को देखकर कहा।

'बहुत गम्भीर हो लाल! क्या बात है?'

'नयना यहाँ भी पहुँच गयी सरदार!' लाल ने कहा।

'वह लड़की! मुझे मालुम है—आजकल वह रेखा के साथ रह रही है न?'

'हाँ, वह मेरे पीछे पागल हो गयी है सरदार!....'

'पागल तो वह बहुत पहले से ही थी लाल !...तुम तो ठीक हो न?...'

'मैं ठीक हूँ मगर उसका पागलपन मुझे भी ले बीतेगा....'

'कैसे?....'

'अभी वह यहाँ आई थी....' लाल बोला।

'क्या कहती थी वह?'

'रेखा के साथ मेरी घनिष्ठता देखकर वह आवेश में आ गई है। कमजोर नारी का आवेश बड़ा खतरनाक होता है...कहती थी, यदि मैंने उसे स्वीकार न किया तो वह मि॰ शर्मा से सब कुछ कह देगी...'

बिलफोर्ड चौंक पड़ा—'मि॰ शर्मा से कह देगी वह!.... बेवकूफ लड़की!...तुमने उसे रोका नहीं लाल?'

'कैसे रोकता उसे?....'

'रिवाल्वर तो तुम्हारे पास था न?....'

'था, मगर तभी रेखा आ गई और उसे अपने साथ लिवा ले गई...मैं कुछ न कर सका। कहीं उसने जाकर मि॰ शर्मा से कह न दिया हो....'

'अभी वे घर पर नहीं हैं!....' बिलफोर्ड ने कहा।

'मगर वह उनसे कहेगी जरूर !....वह पागल लड़की जो न कर डाले....'

'उसे मैं देख लूँगा, तुम उधर से निश्चिन्त रहो....' बिलफोर्ड ने कहा—'लाल ! मैं आज दो बहुत जरूरी बातें तुम्हें सुनाने आया हूँ....एक दुखद है और दूसरी गम्भीर !...एक स्वयं तुमसे सम्बन्ध रखती है, दूसरी मण्डल से....तुम पहले किसे सुनना चाहोगे !....'

'मुझे अपनी परवाह नहीं सरदार !....आप पहले मण्डल की बात सुनाइये....'

'शाबास !....' बिलफोर्ड ने कहा—'सम्राट का जन्मदिवस मनाने के लिए देश के कोने-कोने से धन की वसूली हुई है... जनता ने स्वेच्छा से दान नहीं दिया है। कहीं-कहीं तो इस वसूली के लिए बेहद जुल्म भी किये गये हैं....देश के नेताओं ने भी इस अमानुषिक कार्य का तीव्र विरोध किया है ? परन्तु गुलाम देश के नेताओं की सुनता ही कौन है ? यदि इस समय हमने बल प्रयोग न किया तो गरीब देश की पिसी हुई जनता की कमाई शराब बन कर गोरों-के पेट में उतर जायगी....वह सारा धन कल ३-अप से राजधानी जायगा....तुम शायद जानते होगे कि आजकल मण्डल को धन की कितनी आवश्यकता है....हमें चाहे जैसे हो, इस धन पर अधिकार करना ही होगा...'

'मैं तैयार हूँ सरदार !....'

'३-अप दो बजे रात इधर से गुजरती है....हमारा ख्याल है कि हमें अधिक खतरा न उठाना पड़ेगा, क्योंकि सरकार को हमारे इरादे का कोई पता नहीं लग सकेगा...मण्डल के पचास जवान तुम्हारे साथ रहेंगे। तुम उनका कमाण्ड करोगे....'

'बहुत अच्छा !....'

'यदि कोई बात हो जाय तो याद रहे लाल, तुममें से किसी

का भी जीवित शरीर कोई न पा सके....'

'मैं इस पर ध्यान रखूँगा सरदार !....'

'अच्छा अब दूसरी बात सुनो....घटना दुखद है और तुमसे सम्बन्ध रखती है....सुनकर तुम कमजोर तो नहीं हो जाओगे ?'

'अगर आपको विश्वास न हो मुझ पर तो वह बात मुझसे न कहें आप....' बोला लाल ।

'मुझे तुम पर विश्वास है....तुम कमजोर नहीं हो सकते लाल !....देश-जननी के आँसू जिसने देखे हैं, वह अपनी जननी की मृत्यु पर आँसू नहीं बहा सकता...'

'सरदार !....'

'लाल तुम्हारी माताजी चल बसीं ! गाँववालों ने उन्हें अग्नि के हवाले कर दिया....बूढ़ी भी तो हो चुकी थीं....क्यों बेटा ?'

'हाँ सरदार !'

'लाल ! अपने नेत्र पोछ लो....आँसू बह चले हैं....'

'नहीं सरदार ! आँसू नहीं बह सकते...मैं उन्हें रोक लेता हूँ....मेरी माताजी मरी नहीं अभी जीवित हैं, रो रही हैं, गुलामी की बेड़ियों से जकड़ी हुई....मेरी माताजी मर नहीं सकतीं सरदार! उन्हें कोई नहीं मार सकता....उन्हें कोई छू भी नहीं सकता !'

विलफोर्ड उठ खड़ा हुआ और चला गया।

लाल निश्चल बैठा रहा । उसकी माँ मर गई, उसकी जन्मदात्री उसको देखने के लिए तड़पती-तड़पती चल बसी । उसने उसे पैदा किया, अपने दूध से उसे जवानी दी मगर बेटे का सुख वह न भोग सकी । जन्मभूमि के सुख-दुख पर मिटने वाला युवक, मानवी माता के लिए कितना दुख उठाये ?

'लाल भैया !....'

'चली आ रेखा !...'

'माताजी चल बसीं भैया...अभी वह साहब क्या कह गया

है !....' रेखा अन्दर आकर बोली।

'हाँ रेखा !....तू कब से बाहर खड़ी है ?'

'अभी ही तो आई हूँ, केवल माँ की खबर सुन सकी हूँ.... यह साहब तो पहले ही पहल आया था भैया ? कभी इसे देखा नहीं...कौन था ?'

'मेरा एक दोस्त !....मुझसे मिलने गाँव गया...वहीं उसे यह खबर मिली....क्या करूँ रेखा ! माँ का मोह तो सभी को होता है....'

'लाल भैया ! देश के मोह के आगे माँ का मोह कुछ नहीं.... तुम्हें बहुत-कुछ करना है...अगर शिथिल पड़ गये तो कुछ भी न कर सकोगे...' रेखा लाल की कुर्सी के पीछे आ खड़ी हुई और उसे उठाकर चारपाई पर ला बिठाया।

लाल के धैर्य का बाँध आँसू बनकर बहने-बहने को था। रेखा की सान्त्वना पाकर वह और भी बह चला। रेखा लाल के पास चारपाई पर बैठ गई। उसके सर को अपनी गोद में रखकर, साड़ी के छोर से उसके आँसू सुखाने लगी।

'रेखा, माँ तो चली गईं....उन्हें सुख देना तो दूर रहा, मरते समय कुछ धैर्य भी न दे सका। अपनी सफाई भी नहीं दे सका रेखा कि माँ का बेटा इतना बेवफा नहीं जितना समझकर वह मरी हैं....उसे अब कहाँ पाऊँगा रेखा !...'

'लाल भैया ! क्या सभी नारियों में तुम अपनी माँ की सूरत नहीं देख सकते ?'

'देख सकता हूँ रेखा, तुम दिखाओ...मैं देखूँगा माँ को ..'

'देखो लाल भैया !....' रेखा ने लाल के शरीर को अपने सीने में छिपा लिया—'मुझे देखो...मैं भी नारी हूँ....माँ समझ सकोगे मुझे...'

लाल एकटक रेखा का मुख देखता रहा। रेखा उसे अपने

सीने से लगाये उसका सर सहलाती रही। धीरे-धीरे लाल की आँखें बन्द हो चलीं। बड़ी देर तक लाल बेसुध पड़ा रहा।

फिर धीरे से उसने अपनी आँखें खोलीं और उठ बैठा।

'लाल भैया !....'

'मुझे शान्ति मिल गई रेखा....मेरी रेखा। तुम पूर्ण नारी हो। माता की ममता, पत्नी का सेवा-भाव, बहन का भ्रातृ-प्रेम, बेटी की श्रद्धा सब कुछ मिला है तुमसे...मेरे मन-मन्दिर की देवी ! तुम्हें कैसे प्रणाम करूँ...'

लाल रेखा के पैरों पर गिर पड़ा।

'लाल भैया !....बड़े मूर्ख हो तुम ! मेरे पैर पड़ते हो, छोटी-सी बच्ची के....' रेखा ने अपना पैर खींच लिया—'अपने पैरों का सहारा मुझे नहीं देना चाहते तो तुम्हारे मस्तक का बोझ लेकर क्या करूँगी मैं....'

लाल उठ बैठा। गम्भीर हो रहा। बोलना चाहकर भी कुछ बोल न सका।

'लाल भैया, थोड़ा हँस लो तो ताकत आ जायगी....आँसू गिराने से तो सारी शक्ति निकल जाती है...हाँ, नयना को तुमने कुछ कह दिया था क्या ?'

'नहीं तो ?'

'अजीब लड़की है लाल भैया !....यहाँ से जाकर रोने लगी। बहुत पूछा, मगर बताया नहीं तो तुमसे पूछने इधर आ गयी ! मुझसे कहती थी कि वह पिताजी से कुछ बातें करना चाहती है....'

'ऐसा कहती थी !....' लाल आश्चर्य से भरकर बोला—'रेखा, यह लड़की बड़ी खतरनाक है...'

'कैसे ?...'

'नारी जब फिसल पड़ती है तो फिसलती ही जाती है....नयना

निराश होकर चुड़ैल बन गयी है....वह सर्वनाश करेगी अब ?'

'लाल भैया...कैसी बातें करते हो !...नयना किससे निराश हुई है !....क्या तुमसे ?....'

'हाँ।'

'तुमने उसे निराश क्यों किया ?...वह क्या चाहती थी तुमसे ?'

'वह मुझे पंगु बनाना चाहती थी....' लाल ने कहा—'देश के पीछे पागल लाल को वह अपने प्रेम में पागल करना चाहती थी...'

'तुम कह रहे हो ऐसा, इसलिए विश्वास कर रही हूँ लाल भैया ! .. मगर नयना ऐसी लड़की नहीं। वह तुम्हें पाने की चाह रख सकती है, तुम्हारा सर्वनाश करने की नहीं....'

'वह ऐसा ही करेगी रेखा !...वह तुम्हारे पिताजी से मेरा सारा भेद कह देगी....'

'वह तुम्हारा भेद कैसे जान गई लाल भैया !'

'यह वही लड़की है, जिसके घर मैं लखनपुर में ठहरा था !...'

'और जिसे जमनापुर थाने से भगा लाये थे ?'

'हाँ !'

'मैं समझ गई लाल भैया !'

'मैं उससे घृणा करता हूँ रेखा !....ऐसी नारी का मुझे मोह नहीं। उस समय तुम न आ पहुँची होती तो मैं उसका खून कर डालता...'

'मैं उसे रोकूँगी लाल भैया !....वह पिताजी से कुछ नहीं बता सकती....रेखा के रहते वह ऐसा कभी नहीं कर सकती....'

'तुम उसे मत समझाओ रेखा !...मैंने सब प्रबन्ध कर लिया है...यदि उसने तुम्हारे पिताजी के सामने जरा भी जबान खोली तो...'

'मैं उसे समझा दूँगी लाल भैया !....' कहकर रेखा उठ खड़ी हुई। अपने घर आई। नयना उस समय शान्त हो चुकी थी और दाई के साथ बैठी हुई उसका खाना पकाना देख रही थी।

'नयना !....जरा इधर आ तो !....'

कहकर रेखा अपने कमरे की ओर बढ़ी।

नयना भी पीछे-पीछे आई। बोली—'क्यों बुलाया जीजी !'

'कुछ बातें करनी है....' रेखा ने कहा—'तू बैठ जा....'

नयना बैठ गई, रेखा ने दरवाजा बन्द कर लिया।

'क्या कहती हो जीजी !'

'तू रो क्यों रही थी !....'

'जी भर आया था जीजी !' बोली नयना।

'शायद परदेसी की याद आ गई थी ! तेरा परदेसी तुझे नहीं चाहता !'

'नहीं !....तुम्हें किसने बताया !'

'लाल भैया ने !'

'तो तुम सब जान चुकी हो रेखा जीजी ! अब अनजान बनने से क्या फायदा ! जिसे तुम चाहती हो, वह मुझे कब चाहेगा !....'

'भूलती है नयना तू !....' कहा रेखा ने–'लाल सभी का है। उसके लिए हर नारी बराबर है। हाँ, कमजोर नारी से वह घृणा करता है जरूर ! तू इतनी बेताब क्यों हो उठी है !....'

'रेखा जीजी ! अपना घर लुटता हुआ देखकर कौन धीरज रख सकता है !'

'देख नयना ! लाल फौलाद है, जिस पर कमजोर कलेजे की पीड़ा असर नहीं कर सकेगी....उसे पाना है तो त्याग करती चल आँखें मूँद कर....'

'तुमने अपने पिताजी से उसका भेद खोल देने का भय दिखाकर उसे अपने वश में कर लिया है जीजी !....वह कभी मेरी नहीं सुनेगा....'

'तू मुझे अपने रास्ते का काँटा समझती है नयना ! वही सही, मैं अपनी सफाई देना नहीं चाहती ! लाल से हम दोनों प्रेम करती हैं। चल अपनी किस्मत का फैसला कर लें....'

'कैसे ?....' नयना ने पूछा।

'एक कटार तू ले ले और एक मैं....जो जीती बचे वह लाल की हो रहे....' रेखा ने कहा।

'अरे बाप रे !....' नयना डर गई !

'इसी बल पर तू लाल को पाना चाहती है !....' बोली रेखा—'याद रख ! इस जन्म में लाल तेरा कभी नहीं हो सकता....'

'मैं इसे जान चुकी हूँ....और निराश होकर ही मैं तुम्हारे पिताजी की शरण लेना चाहती हूँ....'

'चुप रह नयना ! मेरी भलाई का बदला इस तरह मत दे...'

'यही एक बात मुझे रोक रही है जीजी !....मैं इस पर विचार करूँगी....'

'विचार कर ले...' कहा रेखा ने—'तेरा जो आखिरी फैसला हो, वह मुझे बताकर ही पिताजी के पास जाने की सोचना...'

'बहुत अच्छा !....'

शाम को—सबने साथ-साथ खाना खाया। नयना गम्भीर रही। मि० शर्मा सोने चले गये। रेखा भी अपने कमरे में आयी। नयना बूढ़ी दाई के कमरे सोती थी।

दाई तो पड़ते ही अपनी बिल्ली की तरह गुर्राने लगी मगर नयना को नींद नहीं थी। वह सोच रही थी। करवटें बदल रही थी बेचैनी के साथ। रेखा का भी कमरा शान्त एवं अन्धकारमय था। नयना दरवाजे के पास आई। उसे खोलकर सतक दृष्टि से चारों ओर देखी, फिर मि० शर्मा के कमरे की ओर बढ़ी।

मि० शर्मा पलङ्ग पर लेटे हुए अखबार पढ़ रहे थे।

नयना को देखकर उठ बैठे—'आ बेटी !...क्या बात है ?'

'मैं एक भेद की बात कहने आयी हूँ....' नयना ने कहा।

नयना जिस दरवाजे से अन्दर आई थी, वह खुला था और उसी के बाहर छिपकर खड़ी हुई एक काली शकल अन्दर की सब बातें सुन रही थी। उसके हाथ में रिवाल्वर भी था, जो नीचे को झुका हुआ पड़ा था, चुपचाप।

'कौन-सी भेद की बात है....तू बेखौफ कह !....' मि० शर्मा ने कहा।

'पिताजी ! मैं दाई की भतीजी नहीं हूँ....'

'तब कौन है तू....'

'मैं लखनपुर के जियावन की बेटी हूँ...एक रात एक परदेसी मेरे यहाँ आकर ठहरा। मैं उसे अपना दिल दे बैठी....मगर वह डाकू निकला ! उसके प्रेम में पड़कर मेरा घर-बार नष्ट हो गया। बापू की जान मेरी आँखों के सामने चली गयी....मगर मैं प्रेम में अन्धी होकर चुपचाप खड़ी देखती रही...'

'मैं सुन रहा हूँ, तू कहती चल....' मि० शर्मा विस्मय में भरे बैठे थे।

'उसी डाकू ने मुझे जमनापुर थाने से भगाया था, मगर मैं उसे पुलिस समझ कर भाग निकली...अब मेरे प्रेम को ठोकर लग गयी है। मैं निराश हो चुकी हूँ। मैं सब कुछ बता दूँगी पिताजी ! सब कुछ...चाहे मेरी भी जान क्यों न चली जाय....'

'तेरी जान का जिम्मा मैं लेता हूँ...' मि० शर्मा ने कहा—'तू उस डाकू को पहचानती है ?'

'हाँ !...' नयना ने कहा !

दरवाजे के बाहर खड़ी हुई उस काली शकल का रिवाल्वर एकाएक नयना की ओर तन गया।

'कौन है वह ?' मि० शर्मा ने पूछा।

'वह...वह...'

तभी—धायँ ! धायँ ! दो गोलियाँ लगातार छूटीं और नयना का शरीर लड़खड़ा कर कुर्सी के नीचे आ गिरा, लहूलुहान।

चीखकर नयना शान्त हो गयी।

मि० शर्मा लपककर बाहर दौड़े। उधर रेखा अपने कमरे में चिल्ला रही थी—'दाई ! यह आवाज कैसी थी ?

तभी मि० शर्मा वहाँ दौड़े आये—'रेखा बेटी !....गोली की आवाज नहीं सुनी तूने ?...नयना को किसी बदमाश ने गोली मार दी।' और वे दौड़ते हुए चले गये।

रेखा रोती हुई दाई के कमरे में आई। उसे जगाया—'दाई—नयना—गोली—' वह ठीक से कुछ कह न सकी।

बूढ़ी उठ बैठी—'क्या हुआ नयना को ?—क्या हुआ मेरी बच्ची को ?—'

दोनों दौड़कर मि० शर्मा के कमरे में आईं। नयना का शरीर ठण्डा पड़ गया था।

'मेरी बच्ची !...' दाई फूट-फूटकर रोने लगी—'मैं लुट गई—किस हत्यारे ने मेरी लड़की की जान ले ली ?—मैं उसकी बोटी-बोटी नोच डालूँगी....'

'दाई ! मैं जरा लाल भैया को बुला लाऊँ...'

रेखा लाल के घर आई। दरवाजा खटखटाने पर लाल ने नींद से उठकर खोला।

'लाल भैया ! तुमने गोली की आवाज सुनी ?....'

'नहीं तो !—कैसी गोली ?—'

'पिताजी के कमरे में नयना को किसी ने गोली मार दी ?—'

'किसने मारी गोली ?—' लाल ने साश्चर्य पूछा।

'तुम्हीं ने मारी होगी—शाम को कहते थे न कि अगर नयना ने पिताजी से जरा भी जबान खोली तो—'

'चुप रह रेखा !—तू बार-बार मुझ पर शक करती है—चल मैं भी चलता हूँ—'

लाल और रेखा आये तो मि० शर्मा सभी जगह फोन कर चुके थे। लाल को देखकर बोले—'लाल बेटा! पुलिस को फोन कर चुका हूँ—तुम जाओ, नहीं तो तुम्हें भी परेशान होना पड़ेगा—'

लाल नयना को थोड़ी देर तक देखकर चला गया।

आधे घण्टे बाद ही स्वयं कलेक्टर साहब पहुँचे। पुलिस की गारद भी आई। चारों ओर दौड़-धूप शुरू हो गई! पहले वाले कलेक्टर की बदली हो गई थी और अब एक खूँखार अंग्रेज कलेक्टर के पद पर था। वह हर हिन्दुस्तानी को सन्देह की दृष्टि से देखता था, इसीलिए सरकार ने उसे यहाँ भेजा था।

कलेक्टर ने मि० शर्मा, रेखा तथा दाई से अनेक प्रश्न किये। मि० शर्मा उस भयङ्कर अंग्रेज की आँखों में खटकने के डर से नयना का वास्तविक भेद छिपा गये। निश्चित यही हुआ कि हत्या-कारी मि० शर्मा की हत्या करना चाहता था। परन्तु भूल से गोली नयना को जा लगी।

पिछले हफ्ते जब यह अंग्रेज कलेक्टर यहाँ आया था तो उसने सभी स्थानीय अफसरों एवं कर्मचारियों का रेकर्ड ध्यान-पूर्वक देखा था। मि० शर्मा बहुत दिनों से सरकारी पद पर थे और सदैव अपने उत्कृष्ट कार्य के लिए पुरस्कृत किये गये थे।

पूछ-ताछ खतम हुई तो कलेक्टर चला गया।

● ●

दोपहर को लाल नयना के दाह-संस्कार से लौटा! उसका शरीर न जाने क्यों थका-सा लग रहा था। उसे आज रात अपने जीवन की सबसे महान्, महत्वपूर्ण और खतरनाक परीक्षा देनी

थी। सफलता के विषय में लाल का विश्वास अडिग था। परन्तु प्रस्थान करने के पहले वह एक बार सरदार से मिलकर नवीन समाचार जान लेना चाहता था।

लाल तैयारी करने लगा। बड़ा-सा शीशा उसने हटा दिया था और अब उसकी गुप्त एवं भयानक वस्तुयें उसके स्नानागार की दीवाल की एक गुप्त आलमारी में थीं। लाल ने आलमारी खोल कर अपने रिवाल्वर साफ किए और कारतूसों की पेटी दुरुस्त की। शाम होते-होते उसने सारी तैयारी पूरी कर ली। मगर सरदार नहीं आया।

आई भी तो रेखा। पहले से गम्भीर-गहन मुख किए।

'क्या कर रहे थे लाल भैया? तीन बार आकर लौट गई, हर बार दरवाजा भीतर से बन्द!...'

'तूने पुकारा क्यों नहीं।'

'सोची, जरूरी काम में बाधा क्यों डालूँ—कौन-सी पहेली सुलझा रहे थे लाल भैया, दरवाजा बन्द करके।'

'तेरा सर सुलझा रहा था—'

'मेरा सर तुम हमेशा सुलझाया करते हो लाल भैया! अभी उस दिन मैं चीखकर गिर न पड़ी होती तो तुम्हारी गोली ने मेरा सर सुलझा ही दिया था—तुम्हारा निशाना दूसरों के लिए बड़ा पक्का है लाल भैया! रेखा ही तुम्हारे निशाने को बेनिशाना कर देती है—'

'इधर आ रेखा!—'आकर मेरे कलेजे से लग जा—' लाल का स्वर कुछ व्यग्र हो चला था।

'लो लग गई, रेखा दौड़कर लाल के शरीर से लिपट गई—'आज तो तुम बहुत पीले-पीले से नजर आ रहे हो? नयना ने जान दे दी मगर तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ा।'

'माँ मर गई है न रेखा! आज घर जा रहा हूँ—'

'लौटोगे तो जल्दी ही ?'

'शायद लौटूँ, शायद न लौट सकूँ !...दिमाग ठीक नहीं है रेखा—माँ के मरने पर कौन बेटा स्थिर रह सकता है....'

'मुझसे तुम छिप नहीं सकते लाल भैया !—रेखा की सावधानी अब बड़ी सजग हो चुकी है—तुम जिस माँ के पीछे पागल हो, उसे रेखा जानती है, केवल देख नहीं सकती है उसे—'

लाल के शरीर से लगी-लगी रेखा आँसू बहाने लगी। सर नीचा था सो लाल देख न सका।

'लाल भैया ! तुम कहीं जाओ, रेखा के लिए अपनी जान सुरक्षित लेकर लौटना...कहीं तुम्हारी जान की जरूरत हो तो रेखा की जान भी अपने साथ लिए चलना...'

'मैं जा ही कहाँ रहा हूँ पगली !....दो चार दिन के लिए गाँव भी नहीं जाने देगी मुझे ?'

'मुझ पर तुम कब विश्वास करोगे लाल भैया !....अब भी तो कर लो...रेखा के पैर जब तुम्हारे पैरों से मिलकर चलेंगे तो देख लेना जमीन की छाती दहल जायगी।'

'मैं तुझे नहीं ले जा सकता !....जिद मत कर !...'

'मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगी लाल भैया ! तुम रेखा को छोड़कर भाग रहे हो....नहीं जाने दूँगी। नहीं, नहीं, नहीं !....' रेखा लाल का पैर पकड़कर लटक गई।

लाल ने घड़ी देखी, प्रस्थान करने में केवल एक घण्टे की देर थी, वहाँ पहुँचते-पहुँचते उसे रात के दो अवश्य बज जायेंगे.... वह व्यग्र हो उठा—'रेखा मेरा पैर छोड़ दे....'

'मुझे न छोड़ो भैया, रेखा का मोह मत तोड़ो...'

'रेखा ! कर्तव्य के आगे मुझे मोह की चिन्ता नहीं....' लाल कठोर हो गया था—'नयना हो या रेखा, मेरे कर्तव्य-पथ पर जो भी अड़ेगी, उसे दूर कर दूँगा...छोड़ दे मेरा पैर....रेखा !....'

'नहीं छोड़ूँगी लाल भैया !...'

'तो ले तू भी जा...' कहकर लाल ने रेखा की छाती पर कस कर लात जमा दिया। रेखा दूर छटक गई। मुँह से चीख भी नहीं निकली, चोट खाकर भी उठ खड़ी हुई वह।

बोली—'लात की एक चोट मोह की डोरी नहीं तोड़ सकती लाल भैया !....'

'चली जा यहाँ से, नहीं तो....' लाल का रिवाल्वर निकल आया था। वह पूरे आवेश में था।

'नहीं तो गोली चला दोगे...नयना मत समझो मुझे लाल भैया ! मैं रेखा हूँ....और रेखा पर तुम्हारी गोली असर नहीं करेगी...दूर करना चाहो तो दो-चार लात और जमा दो !'

'नीच कहीं की !....' दौड़कर लाल ने रेखा को पकड़ लिया और कसकर कई तमाचे जड़ दिये, फिर उसे घसीटता हुआ ले जाकर बाहर ढकेल आया। भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया उसने।

दस बजे रात लाल पूर्ण रूप से तैयार होकर बाहर निकला। उसने ग्रेट कोट पहन लिया था। कोट के नीचे चुस्त काला लबादा था। कमर की पेटी में दो रिवाल्वर थे और कन्धों पर कारतूसों की पेटी। काली नकाब कोट की जेब में थी। वह अन्धकार में तेजी से पैदल ही बढ़ चला। कई मील का रास्ता उसे तय करना था और ठीक दो बजे रात अपनी मंजिल पर पहुँच जाना था।

बढ़ा जा रहा था लाल।

उसे खबर न थी कि उसके पीछे-पीछे कुछ दूर पर एक काली शकल भी उसका पीछा कर रही है।

× × ×

अंग्रेज कलेक्टर का बँगला ! रात के दस बजे हैं। जब से यह कलेक्टर ब्राउन आया है, तब से बँगले के चारों ओर कड़ा पहरा

पड़ने लगा है। ब्राउन के कमरे में इस समय कई बड़े-बड़े अफसर मौजूद हैं। कोई गुप्त मन्त्रणा हो रही है।

'मि० शर्मा अभी तक नहीं आये !....' ब्राउन ने कहा।

'फोन पर बोले कि अभी आता हूँ....' एक अफसर बोला।

'आज वे दाह-संस्कार में फँसे थे....थक गये होंगे...आ ही रहे होंगे....' दूसरे अफसर ने कहा।

'इतनी देर मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता !' ब्राउन ने कहा—'मैं स्वयं फोन करता हूँ...'

लपक कर ब्राउन दूसरे कमरे में चला गया।

तभी मि० शर्मा ने पूरी वर्दी में प्रवेश किया।

'आ गये आप....डी० एम० साहब अभी आपको याद करने फोन पर गये हैं !' कई अफसरों ने एक साथ कहा।

'माफ करें....मुझे देर हो गई....' बोले मि० शर्मा।

तभी तमतमाया चेहरा लेकर ब्राउन लौटा ! मि० शर्मा को देखकर उबल पड़ा—'कहाँ रह गये थे आप !...आपने क्या बिल्लियाँ भी पाल रखी हैं, जो फोन रिसीव करती हैं।

'माफ करें साहब !....' मि० शर्मा ने कहा—'दाई उस लड़की की मौत से पागल हो गई है और सुबह से ही बिल्लियों की बोली बोल रही है....रेखा भी नहीं रही होगी शायद....'

ब्राउन बैठ गया। मि० शर्मा भी बैठे।

'अब काम की बातें हों....' ब्राउन ने कहा—'मि० शर्मा आज ३-अप से सरकारी खजाना कैपिटल जा रहा है....मैं इतने अफसरों से राय कर चुका हूँ....हमारे जासूस खबर लाये हैं कि बागी लोग वह खजाना लूट लेना चाहते हैं। मुझे यह खबर दोपहर को ही मिल चुकी थी। मैंने फोन से सब इन्तजाम कर लिया है। ३-अप मेन लाइन से न जाकर, अब लूप-लाइन से कैपिटल पहुँचेगी। ट्रेन पर पहरे का इन्तजाम बहुत बढ़ा दिया

गया है। वह खतरे से बाहर है...बागी ठीक समय पर वहाँ पहुँचेंगे, जहाँ से ट्रेन गुजरने वाली थी। हम उन पर धावा बोलना चाहते हैं।'

मि० शर्मा समझ गये कि ब्राउन को उन पर सन्देह हुआ है, तभी उसने बागियों के इस इरादे की खबर पहले उन्हें नहीं बताई—'मैं तैयार हूँ साहब ! आप हुक्म दें !...' वे बोले।

'आप पुलिस की पूरी ताकत साथ लें और धावे के लिए अभी तैयार हो जायँ...मैं भी चलूँगा साथ में ...' ब्राउन ने कहा।

अब मि० शर्मा को ब्राउन के सन्देह का पक्का विश्वास हो गया। पर वे कर ही क्या सकते थे ! वफादार सरकारी नौकर अपनी मानहानि नहीं देखता, अपने कर्तव्य का पालन करता है। वे बोले—'मैं अभी फोन से सारा प्रबन्ध कर देता हूँ। मैं भी पूरा तैयार होकर ही चला हूँ !

× × ×

रेल की समानान्तर पटरियाँ दूर तक चली गई हैं।

क्रासिंग के एक फर्लाङ्ग दूर घनी झाड़ियों के बीच पचास नकाबपोशों का गिरोह खड़ा है, चुपचाप, गतिहीन।

लाल सबसे आगे है। उस गिरोह का सरदार है वह। उसकी आज्ञा पर इतने बहादुरों का कार्य आधारित है।

लाल ने अपनी घड़ी देखी, कहा—'नं० ३५, पन्द्रह मिनट और हैं, सबको होशियार कर दो, तुम तीन-चार आदमियों के साथ पटरियों के बोल्ट निकाल डालो और लाइन अलग कर दो।'

धीरे-धीरे चार नकाबपोश रिञ्च तथा अन्य औजार लेकर रेलवे लाइन की ओर बढ़े। तेज हाथों ने अपना काम प्रारम्भ कर दिया। तभी—धायँ !...दुम्म ! धायँ !

नीरव वातावरण को चीरता हुआ कई राइफलों का स्वर गरज उठा ! रेलवे लाइन उखाड़ने वाले नकाबपोश वहीं लोट पड़े।

'खतरा !....' लाल चिल्लाया—'सब लोग छिप जाओ....'

पलक मारते सभी नकाबपोश तितर-बितर होकर पास की झाड़ियों में छिप गये। लाल भी एक झाड़ी की ओट में आ गया। रेलवे लाइन के उस पार से फिर आवाज आई—धायँ! धायँ!

नकाबपोशों में से कई चीख पड़े। लाल चिल्लाया—'डटे रहो, फायर !....१-अप आती ही होगी....हाथ से निकल न जाय...'

नकाबपोशों की तरफ से भी गोलियों की बौछार हुई।

प्रतिद्वन्द्वियों ने भी उत्तर दिया।

दोनों ओर से चीख-चिल्लाहट मच गई। गोलियाँ बराबर चलती रहीं। घमासान युद्ध आरम्भ हो गया दोनों ओर से। गोली-बाज अपने रिवाल्वर और राइफलों की कला दिखाने लगे।

लाल हैरान था, अपने ऊपर किए गए इस अचानक आक्रमण से। आक्रमणकारी पुलिस ही होगी! उन्हें कैसे पता चला।

गोलियाँ बराबर चल रही थीं। लाल ने घड़ी देखी। ट्रेन आने में केवल दो मिनट रह गये थे। वह बेचैन हो उठा।

बेचारे लाल को क्या मालूम कि ट्रेन ने रास्ता बदल दिया है और नकाबपोशों से चौगुनी संख्या में सशस्त्र पुलिस मि० शर्मा और ब्राउन के साथ मोर्चे पर डटी है।

लाल के रिवाल्वर उसके दोनों हाथों में तैयार थे। दो मिनट भी बीत चले, ट्रेन नहीं आई। तभी लाल के कन्धे पर किसी ने धीरे से हाथ रख दिया। लाल चौंक पड़ा, घूमकर देखा तो अपने ही दल का एक नकाबपोश था।

'क्या है ?....' लाल ने पूछा।

'कुछ भी तो नहीं !' नकाबपोश ने कहा।

स्वर सुनकर लाल आसमान से गिरा। यह किसका स्वर सुन रहा है वह—'क्या करने आये हो ?' लाल ने पूछा।

‘तुम्हारा साथ देने....’ बोला नकाबपोश।

लाल ने आवाज पहचान ली। लपककर उसने उस नकाब-पोश को सीने से लगा लिया, बोला—‘रेखा तुम यहाँ कैसे !...’

‘लात मार कर भाग आये थे लाल भैया! तुम्हारे पीछे-पीछे पैर सहलाने आ गई। चोट तो लगी ही होगी तुम्हें....’

‘रेखा! मेरे लिए तुम यहाँ से भागो...’

‘तुम्हारे लिए ही तो इतनी दूर से भाग कर आई हूँ....अब कहाँ भगा रहे हो लाल भैया!....’

‘धायँ!....’ एक पुलिस कुछ नजदीक आ गया था, जिसे रेखा ने धराशायी कर दिया।

‘रेखा!....तुम्हारे पास रिवाल्वर भी है!....’ लाल चकित था।

‘हाँ लाल भैया! इसे एक खिलौना ही समझो!’

‘तुम्हारा निशाना सध चुका है!....’

‘तुमसे कुछ ज्यादा ही....तुम्हारा निशाना कभी-कभी चूक जाता है लाल भैया!...मगर रेखा का सच्चा निशाना तो तुम कई बार देख चुके हो...’

‘कई बार!...आज ही तो देखा है....’

‘झूठ न बोलो लाल भैया!....जज साहब की खोपड़ी पर मेरा निशाना कितना अचूक बैठा था! और नयना तो दो ही गोली खाकर ऐसी हो गई कि साँस भी न ले सकी!....अपने मस्तक की चोट तो तुम भूले जा रहे हो....मैंने ही वह पीली फाइल ले जाकर तुम्हारे सरदार को भिक्षा के रूप में दी थी....’

‘रेखा....क्या हो तुम!...’

‘अब भी नहीं समझे तुम लाल भैया! इतनी परीक्षा देकर भी रेखा तुम्हारे इम्तहान में फेल ही रही!...’

‘मेरी रेखा!...मेरी बच्ची!....तू सचमुच रणचण्डी है...’

तभी पीछे से रायफलें गरज उठीं।

लाल चौंककर बोला—'पुलिस हमें घेरकर आगे बढ़ रही है.... रेखा! हम जल्दी ही पुलिस के पंजे में घिर जायेंगे...हमारा दाँव उल्टा पड़ा है....तुम चली जाओ यहाँ से....'

'यह अधिकार अब मत छीनो लाल भैया!....लौट न सकूँगी अब....भाग भी चली तो पुलिस घेर लेगी....'

रायफलें अब अलग-अलग से भी चलने लगी थीं। क्रान्तिकारी चारों ओर से घिर गये थे। पुलिस का दल घेरा बना कर पास आता जा रहा था। पुलिस की राइफलों के आगे नकाबपोशों के रिवाल्वर कमजोर पड़ते जा रहे थे।

'उफ् रेखा! तुमने यह क्या किया!....' लाल व्यग्र स्वर में बोला—'तुम यहाँ क्यों आई?....अब मरने या पुलिस के हाथों पड़ने के सिवा और कोई चारा नहीं...'

'रेखा इतनी कमजोर नहीं लाल भैया कि तुम्हारे साथ मर भी न सके....'

उसी समय पुलिस-दल पर लाल की दृष्टि पड़ी—'रेखा! रिवाल्वर तैयार रखो....वे लोग पास आते जा रहे हैं....'

धायँ! धायँ! लाल और रेखा के रिवाल्वर गरज उठे। किसी का भी निशाना खाली न गया।

'रेखा उन लोगों को रोको....मैं दूसरी तरफ...'

धायँ...धायँ! धायँ!....उस झाड़ी से गोलियों की बौछार छूटने लगी। उस ओर बढ़ता हुआ पुलिस दल रुक गया। उन्होंने भी उसी झाड़ी को लक्ष्य करके राइफलें दागनी शुरू कर दी!

धायँ! धायँ! दुम्म! धायँ! जान हथेली पर लेकर खड़े हुए लाल-रेखा की मार से पुलिस भी घबड़ा उठी। पुलिस के जवान एक के बाद एक गिरते जा रहे थे। उनका निशाना इतना अचूक बैठता था कि पुलिसवाले हाहाकार उठते थे!

पुलिस का नया दल मोर्चे पर आ डटा। दुम्म! राइफलों

की नई बाढ़ दगी, पूरे वेग के साथ। क्रान्तिकारियों का दल क्षीण हो चला था। कहीं-कही से रिवाल्वर की आवाज गरज उठती थी।

पुलिस समझ गयी कि अब शत्रुओं की संख्या क्षीण हो चली है। ब्राउन और मि० शर्मा भी लाल-रेखा के मोर्चे पर डटे थे। पुलिस की लगभग सारी शक्ति उनके विरुद्ध एकत्र हो चुकी थी।

फिर भी लाल और रेखा के फायर इतने तीव्र थे कि पुलिस को कुछ दूर हटकर पत्थरों की ओट शरण लेनी पड़ी थी।

'रेखा !....हमारे दल वालों के रिवाल्वर सुनाई नहीं पड़ते... सभी काम आये....केवल हम दो ही बच रहे हैं !'

'हाँ लाल भैया !....' रेखा लाल के शरीर की ओट में थी। फायर के साथ-साथ बातें भी हो रही थीं। तभी एक गोली लाल के हाथ में आ घुसी। वह तनिक लड़खड़ाया, फिर सँभल गया।

धायँ ! धायँ ! दुम्म ! दुम्म !

'रेखा !....हमारा शरीर पुलिस के हाथ जीवित न पड़े...रोक दे अपना हाथ....आ मिल लें आखिरी बार !

रेखा निकट आ गयी। दोनों गले मिले। लाल ने रेखा का मस्तक चूमा।

'लाल भैया ! इस जन्म में तुम्हारा बहुत थोड़ा-सा साथ दे सकी....अगले जन्म में तुम्हारी सगी बहन होकर आऊँ....तब समझूँगी कि मेरा त्याग सफल हुआ....'

दोनों फिर एक बार गले मिले। इनके रिवाल्वरों की बौछार बन्द होते ही ब्राउन और मि० शर्मा ने आगे बढ़ने की आज्ञा दी—'दौड़कर पकड़ो....भाग न सकें...'

'एक बात कहनी है लाल भैया ! कान में कहूँगी....'

रेखा ने लाल के कान में कुछ कहा ! लाल चौंक पड़ा—'मुझे स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि....रेखा ! सावधान ! पुलिस

पास आ गयी....अपना रिवाल्वर मेरी ओर करो....तुम मुझे गोली मारो और मैं तुम्हें....निशाना न चूके...'

'तुम अपने निशाने का ख्याल रखना लाल भैया....अच्छा, विदा....'

'विदा रेखा....मेरी जीवन-रेखा! विदा....'

लाल और रेखा एक दूसरे से दो कदम की दूरी पर खड़े हो गये। 'रेखा! फायर....'दोनों के रिवाल्वर एक दूसरे के निशाने पर तैयार हुए।

रेखा की गोली सटीक बैठी। लाल कटी डाल-सा जमीन पर गिर पड़ा! मगर लाल की गोली!....रेखा ज्यों की त्यों खड़ी रह गई थी।

वह चिल्लाई—'लाल भैया! मुझे गोली नहीं लगी....निशाना चूक गया तुम्हारा....मुझसे दगा न करो लाल भैया!'

लाल के काँपते हाथ हिले। रेखा ने रिवाल्वर पकड़ा दिया। परन्तु लाल चिर-निद्रा में लीन हो चुका था।

'दगाबाज निकले तुम लाल भैया!'

रेखा ने अपना रिवाल्वर सीने पर रखा!—तभी किसी ने उसका हाथ मजबूती से पकड़ लिया। ये मि० शर्मा थे। रेखा आत्महत्या न कर सकी।

मि० ब्राउन के टार्च की रोशनी में मि० शर्मा ने रेखा का मुख देखा! उसकी नकाब पीछे उलटी हुई थी।

रेखा को देखकर मि० शर्मा का शरीर काँपा, परन्तु दूसरे ही क्षण उन्होंने आज्ञा दी—'इसे कैद करो....'

रेखा कैद कर ली गई।

'यह लड़की कौन है?—' ब्राउन बोला।

'मेरी ही है सर!—' मि० शर्मा दाँत पीस कर बोले—'मेरे नाम पर कलङ्क लगाने वाली, बागियों का साथ देने वाली यह दगाबाज लड़की मेरी है—इसे अभी उड़ा दो गोली से....'

ब्राउन मि० शर्मा का साहस देखकर दङ्ग रह गया।

वह बोला—'ठहरो!—इसे कैद में रखा जाय—इससे बहुत कुछ पता लगेगा—मि० शर्मा! मैं आपके घर की तलाशी लेने पर मजबूर हूँ!....हम लोग चारों तरफ से कानून की बन्दिश में हैं।'

'आप तलाशी ले सकते हैं—अभी चलकर—'

मि० शर्मा हाथ मल रहे थे।

रेखा जेल भेज दी गई। लाल की लाश पुलिस उठा ले गई।

और ब्राउन ने उसी रात कुछ अफसरों के साथ मि० शर्मा के घर की तलाशी ली पर कुछ हाथ न लगा।

चलते-चलते ब्राउन बोला—'मि० शर्मा! हमें आपकी वफादारी पर तनिक भी सन्देह नहीं मगर कानून की पाबन्दी तो जरूरी है—आप कल सवेरे आठ बजे मुझसे जेल में मिलें—'

× × ×

जेल की एक सुनसान कोठरी में रेखा बन्द थी। बाहर काफी कड़ा पहरा था। रेखा की आँखें बह रही थीं, अपनी दुर्दशा पर नहीं, लाल की बेवफाई पर।

कह रही थी वह धीरे-धीरे—'लाल भैया! तुम बड़े बेवफा निकले। खुद निकल भागे रेखा को अकेली छोड़कर—मेरे निशाने की तुम तारीफ करते थे—मेरी गोली ने तुम्हारी जान ले ली—तुम पुराने निशानेबाज थे मगर तुम्हारी गोली ने मेरा बदन भी न छुआ! रेखा को तुम मरते दम तक न मार सके—रेखा के प्रति इतना प्यार, इतना ममत्व क्यों था तुम्हारे हृदय में?'

कोठरी का फाटक खुला। रेखा ने ब्राउन को देखा और उसके पीछे अपने पिता को देखकर उसने सर झुका लिया।

वार्डरों ने कुर्सियाँ ला दीं। ब्राउन और मि० शर्मा बैठे।

'इसके हाथ पैर बाँध दो!—' मि० शर्मा ने आज्ञा दी।

वार्डरों ने आज्ञा-पालन किया।

'देख लड़की !—' मि० शर्मा बोले—'तू बागियों के बारे में जो कुछ जानती है बता दे वर्ना नतीजा अभी देख लेगी—'

रेखा चुप रही।

'इसे छत से उल्टा टाँगकर हण्टर मारो—' मि० शर्मा थे, स्वर बेहद कड़ा था।

हण्टर बरसने लगे। उल्टी टँगी हुई रेखा की जबान तक न हिली। जहाँ-जहाँ हण्टर पड़ा, वहाँ की खाल से खून झाँकने लगा।

'और जोर से !' मि० शर्मा तड़प कर बोले।

हण्टरों का वेग बढ़ चला।

रेखा का सर लटक गया, बेहोश हो गयी वह।

'बस करो !' इस बार ब्राउन बोला—'इसे उतार कर पानी के छींटे दो—'

छींटों से रेखा थोड़ी देर बाद होश में आई। मि० शर्मा फिर तड़पे—'नालायक लड़की ! कुछ बोलेगी या नहीं !....'

रेखा चुप ! जबान बन्द !

'इसके नाखून में कीलें ठोंक दो—' उछल कर बोले मि० शर्मा।

वार्डर दौड़ पड़े। पतली-पतली कीलें एक के बाद एक रेखा के सभी नाखूनों में चुभो दी गईं। हाथ-पैर में कीलों की पीड़ा दाबे रेखा तनिक भी विचलित न हुई।

'इसके सर में रस्सी बाँध कर ऐठों !—'

रस्सी की ऐंठन से रेखा का मस्तक शून्य हो गया। हठी लड़की फिर भी चुप ही बनी रही, फिर बेहोश हो गई।

'रस्सी खोल दो...पानी के छींटे दो....' ब्राउन का स्वर था।

रेखा होश में लाई गई !

'पागल लड़की !...' मि० शर्मा बोले—'अब भी बता दे.... मुँह से बोल दे कुछ....नहीं बोलती !...वार्डर ! थोड़ी-सी आग

और दो सलाखें लाओ....इस कमीनी को अन्धी करके छोड़ूँगा...'

आग आई, सलाखें भी।

'हठ न कर लड़की ! बता दे तो छोड़ दी जायगी....' बोला ब्राउन रेखा से।

इस बार रेखा की जबान हिली—'तुम चुप रहो मि० ब्राउन ! बस, अपने कर्मचारी की वफादारी देखते चलो....'

सुनकर मि० शर्मा का चेहरा क्रोध से लाल हो उठा। वे उठे उनके दोनों हाथों में सलाखें थीं—लाल ! वे बढ़े रेखा की ओर।

'कुछ बताती है या नहीं !....'

रेखा ने सर उठाकर पिता की ओर देखा ! देखती रही। गर्म सलाखें बढ़ी आ रही थीं।

रेखा एकटक देख रही थी अपने पिता को।

मि० शर्मा के हाथ हिले, सलाखें आगे बढ़ीं...रेखा के नयन-कोटरों से धुआँ निकला, फिर रक्त की धार बह चली।

सलाखें अपना कार्य करके वापस लौट गईं।

'मि० शर्मा !....' ब्राउन हताश स्वर में बोला—'यह लड़की कुछ नहीं बतायेगी। इसे दौरा सुपुर्द किया जाय....'

'जो हुक्म !....'

रेखा पर मुकदमा चला, जुर्म साबित था। उसे गोली मार देने की सजा हुई।

मि० शर्मा ने अर्जी दी कि बागी लड़की को गोली मारने की आज्ञा उन्हें दी जाय। अर्जी मन्जूर हो गई, साथ ही सरकार उनकी वफादारी पर इतनी खुश हुई कि उन्हें 'सर' की उपाधि के लिए चुना गया।

× × ×

जेल के मैदान में अफसरों की भीड़ लगी हुई थी। एक

बेकस बागी लड़की का अपने पिता की गोली से मारा जाना देखने के लिए सभी उत्सुक थे।

कुछ दूर पर काठ की एक टिकठी खड़ी की गयी थी।

समय हुआ तो रेखा पहरे के अन्दर लायी गयी और उस टिकठी से उसके हाथ-पैर बाँध दिये गये।

अन्तिम समय में रेखा ने अपने पिता से मिलने की लालसा प्रकट की। दरख्वास्त मंजूर कर ली गयी। मि० शर्मा रेखा के सामने आ खड़े हुए। पैरों की आहट पाकर रेखा ने कहा—'कौन?...पिताजी!...'

'हाँ! ...' गम्भीर स्वर में बोले मि० शर्मा।

'आखिरी समय में तो बेटी कहकर पुकार लीजिए पिताजी! रेखा नालायक ही सही मगर आपकी बेटी तो है....मि० शर्मा की दृष्टि में रेखा बागी हो सकती है, मगर भिखारी की दृष्टि में तो रेखा देश-सेविका है, महान है!....

'रेखा!....'

'पिताजी, आपका मस्तक अब नहीं खुजलाता क्या?...लाल भैया के सामने तो भिखारी वेश में आप हमेशा अपना मस्तक खुजलाया करते थे?....बागियों के सरदार! रेखा से छिप नहीं सकते तुम! रेखा का विद्रोह अपनी गोली से भले ही शान्त कर दो तुम मगर अपने अन्तर की विद्रोह-भावना कभी शान्त नहीं कर सकोगे...'

'रेखा!....मेरी बच्ची!....' एक क्षण के लिए मि० शर्मा का स्वर लड़खड़ाया—'तूने मुझे कब पहचाना?'

'शङ्का थी पिताजी, परन्तु निश्चय तब हुआ जब आपने मि० ब्राउन से नयना का वास्तविक परिचय छिपाकर, उसे दाई की भतीजी ही बताया—मि० शर्मा जैसा स्वामिभक्त नौकर वैसा नहीं कर सकता था, कभी नहीं....यह बागियों के सरदार का ही काम

था और मैंने आपको पहचान लिया !'

'मैं तेरी तरफ से सावधान था रेखा ! तेरे अन्तर का विद्रोह मैं जानता था...लाल ने भी कई बार सिफारिश की तुझे अपने साथ लेने के लिए....मगर मैं मजबूर था....सरकारी नौकरी की आड़ में जो महान् कार्य मैं कर रहा हूँ, उसके लिए मुझे सतर्क रहना आवश्यक था...मगर तू मानी नहीं, आखिर कूद ही पड़ी–अफसरों को सन्देह न हो इसीलिए मुझे हृदय पर वज्र रखकर इतना काम करना पड़ा....मेरी बच्ची ! हमारे देश के लिए तुझ जैसी हजारों बेटियों की आवश्यकता है....तुझे आज अपने हाथों बलि-वेदी पर चढ़ा रहा हूँ, यह मेरे लिए कम गर्व की बात नहीं...'

'आप जैसे त्यागी पिता के हाथों मर रही हूँ पिताजी !.... ईश्वर करे देश की हर लड़की की मृत्यु ऐसी ही हो...अन्तिम समय लाल भैया से भी मैंने कह दिया था...'

तभी समय के समाप्त होने की सूचना प्राप्त हुई ।

'जाओ बेटी, खुश रहो....देश में अगर ऐसी ही बेटियाँ पैदा हों तो देश कभी गुलाम नहीं रह सकता....'

'आपने मेरी आँखें ले लीं ! अन्तिम समय दर्शन नहीं कर सकती...प्रणाम पिताजी ! दूसरे जन्म में लाल जैसा भाई और आप जैसा पिता मुझे मिलें....'

मि० शर्मा हाथ में रिवाल्वर लेकर पुनः अपने स्थान पर आ खड़े हुए । समय हो चुका था ।

ब्राउन उठ खड़ा हुआ हुआ—'एक ! दो ! तीन....'

धायँ ! धायँ !

लालरेखा की अगली कड़ी क्रान्तिदूत पढ़े ।

—समाप्त—



कुशवाहा कान्त के विषय में स्वनामधन्य पिट्ठू आलोचकों एवं साहित्यिक पन्डों का कहना है--'उसने यौन सनसनी और युवक-युवतियों को गुमराह करने के अतिरिक्त लिखा ही क्या है . . . . .' फिर भी बात चलने पर वे दबी जबान से कह देते हैं--'कुछ भी हो, हिन्दी में आज उसके पाठकों की संख्या सबसे अधिक है। उसने चाहे जो कुछ लिखा हो किन्तु हिन्दी को एक नई शैली, नया मोड़, नया कथानक तो दिया ही है . . . .'

कितने अहिन्दी भाषा भाषियों ने केवल कुशवाहा कान्त की पुस्तकें पढ़ने के लिए हिन्दी पढ़ना सीखा। उनकी प्रत्येक पुस्तक की लाखों प्रतियाँ छप-बिक चुकीं।

कम मूल्य में उनकी कृतियाँ सर्वसुलभ हो सकें, इसीलिए यह पुस्तक पाकेट बुक में दी जा रही है।



भारत पॉकेट बुक्स